बापूकी झाँकियाँ

लेखक
दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

प्रसंग

सन् १९४२ के आन्दोलनके दिनोंमें जब हम सबके सब जेलमें भेजे गये, तो वहाँ भी हमें अेक जगह नहीं रखा गया। मैंने अुन दिनों कुल मिलाकर छह जेलें देखीं। सरकारने सोचा कि प्रतिष्ठित लोगोंको अुन्हींके प्रान्तमें रखना खतरनाक है। अिसलिअे मध्य प्रान्तके प्रमुख व्यक्तियोंको अुसने सुदूर मद्रास प्रान्तके वेल्लोर जेलमें रखा था। वहीं मेरा युक्त प्रांतके कांग्रेसी नेताओंसे परिचय हुआ। सरकारको जब कुछ होश आया और परिस्थिति काबूमें आ गयी, तब हम लोगोंको वेल्लोरसे निकालकर सिवनी जेलमें भेजा गया। वहाँ लेखन, वाचन, और चर्चामें हमारे दिन अच्छी तरह कटते थे। भोजनके बाद जबलपुरवाले ठाकुर लक्ष्मणसिंहजी चौहान, अमरावतीके डॉ० शिवाजीराव पटवर्धन, मैं और दूसरे चंद सज्जन अेक बड़े कमरेमें साथ बैठकर अिधर अुधरकी बातें करते रहते थे। बरामदेकी अपेक्षा वहाँ पर गरमी कुछ कम थी।

यह स्वाभाविक ही था कि लोग मुझे पूज्य गांधीजीके बारेमें पूछते। मैं भी अपनी गपशपमें आश्रमजीवनका कोअी न कोअी किस्सा कह सुनाता था। अेक दिन ठाकुर लक्ष्मणसिंहजीने कहा — 'आपके पास बापूके बारेमें जब अितने किस्से हैं, तब अुन्हें लिखकर क्यों नहीं रखते?' मैंने जवाब दिया — 'मेरी हालत श्री व्यासजी-जैसी है। अुनके दिमागमें महाभारतका सारा अितिहास भरा हुआ था, लेकिन अुसे लिपिबद्ध कैसे किया जाय। अुसे लिखनेवाला अिस दुनियामें कोअी है ही नहीं (परं न लेखकः कश्चित् अेतस्य भुवि विद्यते)। जब गणेशजी-जैसे चार हाथवाले बुद्धिमान लेखक अुन्हें मिले, तब कहीं महाभारत दुनियामें प्रगट हुआ।' लक्ष्मणसिंहजी हँसकर बोले — 'ठीक है। मैं आपका गणेशजी बननेके लिअे तैयार हूँ।' मैंने कहा — 'दिनरात लिखनेकी बात नहीं

है। भोजनोत्तरका गपशपका समय ही अिसमें देना है। अेक दो संस्मरण लिखे कि अुस दिनका काम पूरा हुआ। अैसा करनेसे दूसरे कार्यक्रमोंमें बाधा नहीं आयगी और रोज कुछ न कुछ लिखा भी जायगा। अगर रोज अिसी कामको सारा समय दिया जाय, तो बाकीके सब काम रह जायँगे और अुसके पश्चात्तापमें अिस कामको भी छोड़ना पड़ेगा।' अिसपर रोज थोड़ा थोड़ा लिखनेका तय हुआ, और धीरे धीरे किस्सोंकी संख्या बढ़ने लगी। लिखी हुअी चीज और भी साथियोंने पढ़ी। अुन्होंने प्रोत्साहन दिया कि 'लिखवाते जाअिये'।

ये किस्से किसी खास अुद्देशको ध्यानमें रखकर नहीं लिखे गये हैं। कोअी चर्चा छिड़ी, अुसमें जो प्रसंग याद आ गया, अुसीको तुरन्त अुस दिन दोपहरमें लिखवा दिया।

अब राजबंदियोंके छूटनेके दिन आ गये। सरकारके बड़े अफसर कभी कभी जेल देखने आते रहते थे। अेक दिन अेकने खानगी तौर पर कहा — 'और तो सब छूट जायँगे, लेकिन काका और विनोबा जल्दी छूटनेवाले नहीं हैं। अिनमेंसे श्री विनोबा तो शायद छूट भी जायँ। अुनके खिलाफ हमारे पास कुछ नहीं है। लेकिन काका साहबके लेखोंने बड़ा अूधम मचा दिया था। अुनके छूटनेकी आशा तनिक भी नहीं है।'

मैंने आरामसे अपने किस्से लिखवाना जारी रखा। जब किस्सोंकी संख्या काफी हो गयी, तो विचार आया कि कमसे कम अेक सौ आठ किस्से तो होने ही चाहियें। जब वह संख्या सौके नजदीक पहुँचते दिखी, तो दिनमें दो दो दफ़े लिखवाना शुरू किया। अिस तरह सौके बाद अेक और बढ़ा था कि विनोबाजी और मैं दोनों अेक साथ छूट गये! अिसके बाद तो लक्ष्मणसिंहजी आदि सबके सब क्रमशः छूटते गये।

श्री लक्ष्मणसिंहजी बाहर आनेके बाद मेरी भाषा सुधार कर ये किस्से प्रकाशित करनेवाले थे। लेकिन जेलमें किये हुअे संकल्प बाहर आने पर टिकते नहीं। बाहर आते ही बाहरी दुनियाके अनेकानेक काम सिर पर सवार हो जाते हैं। न लक्ष्मणसिंहजी अिसकी भाषा सुधार सके, न

मैं। मेरी ख्वाहिश थी कि ये सारे संस्मरण, जहाँ तक हो सके, काल-क्रमके अनुसार रख दूँ, लेकिन वह भी मुझसे नहीं हो सका। बहुत दिन तक ये हस्तलिखित जैसेके वैसे पड़े रहे। आखिर मैंने सोचा कि जैसे हैं वैसे ही अेक दफ़े शाया करवा दूँ। समय मिलने पर दूसरी आवृत्तिमें सब तरहके सुधार हो सकेंगे। फलतः यह पुस्तक आजके रूपमें प्रगट हो रही है।

जब ये संस्मरण लिखे गये, तब पू० बापू जीवित थे। अुनका संकल्प और राष्ट्रकी प्रार्थना थी कि वे दीर्घकाल तक जीयें। मैं जानता था कि मुझे ये किस्से संयमके साथ लिखने चाहिये। अगर पू० बापूजीके देखनेमें आ जायँ और कहीं श्रद्धाभक्तिकी अूर्मि अुसमें दिख पड़े, तो अुन्हें अच्छा नहीं लगेगा। अिधर तो यह हस्तलिखित प्रति मैंने 'नवजीवन'को सौंपी और अुधर पू० बापूजी चल बसे। अेक बार सोचा भी था कि अब अिनमें कुछ परिवर्तन करूँ, लेकिन फिर मनमें यही निश्चय हुआ कि फिलहाल जैसे लिखे गये थे वैसे ही रखना अच्छा है।

अिन झाँकियोंमें पाठकोंको पू० गांधीजीका यथार्थ दर्शन तो जरूर मिलेगा, लेकिन वह संपूर्ण दर्शन नहीं कहा जा सकता। ये संपूर्ण दर्शनके कुछ ही पहलू हैं। गांधीजीकी विभूतिकी पूरी पूरी भव्यता अिनमें प्रतिबिंबित नहीं हुअी है। देखनेवाला अपनी शक्तिके अनुसार ही देख सकता है। तिस पर भी प्रसंगवश जो याद आया, वही यहाँ लिखा गया है। यदि गांधीजीके चरित्रकी पूरी छबि खींचने बैठता, तो दूसरे ढंगसे लिखता। यहाँ वैसा संकल्प था ही नहीं। तो भी बापूका संपूर्ण चरित्र लिखनेवालोंको अिन झाँकियोंमेंसे कुछ न कुछ अुपयोगी मसाला मिलेगा ही। अिन झाँकियोंका महत्त्व पू० बापूकी महत्ताके कारण है। मेरी ओरसे तो सिर्फ अितना ही दावा है कि ये बयान प्रामाणिक हैं। जैसे मुझे याद रहे हैं ठीक वैसेके वैसे यहाँ दिये गये हैं। कुछ झाँकियाँ औरोंसे सुनी हुअी बातों पर निर्भर हैं। लेकिन मेरा विश्वास है कि वे सब प्रामाणिक हैं।

नजदीकके या दूरके जिन जिन लोगोंके पास अैसे संस्मरण हों, अुन्हें चाहिये कि वे अपनी यह दौलत दुनियाके सामने धर दें। गांधीयुगकी यह विरासत मानवजातिको मिलनी चाहिये।

नअी दिल्ली, काका कालेलकर
गांधी जयंती, १९४८

बापूकी झाँकियाँ

१

सन् १९१४ की बात है। जब दक्षिण अफ्रीकाका कार्य पूरा करके महात्माजी विलायत गये और वहाँसे हिन्दुस्तान लौटे, तब दक्षिण अफ्रीकाके अिस विजयी बैरिस्टरकी मुलाकात लेनेके लिअे अेक पारसी पत्र-प्रतिनिधि बम्बअीके बन्दर पर ही जाकर अुन्हें मिला। मुलाकात लेनेवालोंमें सबसे प्रथम होनेकी अुसकी ख्वाहिश थी।

अुसने जो सवाल पूछा, अुसका जवाब देनेके पहले बापूने कहा — 'भाअी तुम हिन्दुस्तानी हो, मैं भी हिन्दुस्तानी हूँ। तुम्हारी मादरी ज़बान गुजराती है, मेरी भी वही है। तब फिर मुझे अंग्रेजीमें सवाल क्यों पूछते हो? क्या तुम यह मानते हो कि चूँकि मैं दक्षिण अफ्रीकामें जाकर रह आया, अिसलिअे अपनी जन्मभाषा भूल गया हूँ या यह कि मेरे जैसे बैरिस्टरके साथ अंग्रेजी ही में बोलनेमें शान है?'

पत्र-प्रतिनिधि शर्मिन्दा हुआ या नहीं मैं नहीं जानता, किन्तु आश्चर्य-चकित तो ज़रूर हुआ। अुसने अपनी मुलाकातके वर्णनमें बापूके अिसी जवाबको प्रधानपद दिया था।

अुसने क्या क्या सवाल पूछे और बापूने क्या जवाब दिये, सो तो मैं भूल गया हूँ। किन्तु सब लोगोंको यही आश्चर्य हुआ, और बहुतों को आनन्द भी, कि हमारे देशके नेताओंमें कमसे कम अेक तो अैसा है, जो मातृभाषामें बोलनेकी स्वाभाविकताका महत्त्व जानता है।

अुस समयके अखबारोंमें यह किस्सा सब जगह छपा था।

२

बापू जब विलायतसे हिन्दुस्तान लौटे, तब मैं शान्तिनिकेतनमें था। अुस संस्थाका अध्ययन करनेके लिअे अुसमें कुछ महीनों रहकर और

शिक्षकका काम करके अुसके अन्दरूनी वायुमण्डलको मुझे समझना था। रविबाबूने बड़ी अुदारतासे मुझे वह मौका दिया था।

वहीं पर बापूके फिनिक्स आश्रमके लोग भी मेहमानके तौर पर रहते थे। बापू जब दक्षिण अफ्रीकासे विलायत गये, तब अुन्होंने अपने आश्रमवासियोंको श्री अेंड्रयूज़के पास भेजा था। श्री अेंड्रयूज़ने अिन्हें कुछ दिन महात्मा मुंशीरामके गुरुकुलमें हरिद्वारमें रखा और बादमें शान्तिनिकेतनमें।

अखबार पढ़नेके कारण मैं दक्षिण अफ्रीकाका अपने लोगोंका अितिहास जानता ही था। मेरे अेक स्नेहीके द्वारा गांधीजीके अफ्रीकाके आश्रमके बारेमें भी सुना था। सम्भव है अुन्हींके द्वारा आश्रमवासियोंने भी मेरा नाम सुना हो। शान्तिनिकेतनमें जाते ही मैं अिस फिनिक्स पार्टीमें करीब करीब शरीक हो गया। सुबह और शामकी प्रार्थनायें अुन्हींके साथ करने लगा। शामका खाना भी वहीं पर खाने लगा। ये आश्रमवासी सुबह अुठकर अेक घण्टा मेहनत मजदूरी करते थे। शान्तिनिकेतनवालोंने अिन्हें अेक काम सौंप दिया था। शान्तिनिकेतनकी भूमिके पास अेक तलैया थी और पास ही अेक टीला था। अिस टीलेको खोदकर तलैयाका गड्ढा भरनेका यह काम था। हम दस बीस आदमी यदि रोज अेक घण्टा काम करते रहते, तो न जाने कितना समय अुसे पूरा करनेमें लग जाता। लेकिन हमें तो निष्काम कर्म करना था। रोज बड़े अुत्साहसे हम अपना काम करते जाते थे। मि० पियर्सन भी हमारे साथ आते थे।

जब बापू शान्तिनिकेतन आये, (अुनके आनेका सारा बयान मैं अलग दूँगा।) तो रातको देर तक हम बातें करते रहे। सुबह अुठकर प्रार्थनाके बाद हम मजदूरीके लिअे गये। वहाँसे लौटकर आये तो क्या देखते हैं! हम लोगोंका नाश्ता — फल आदि सब काटकर — अलग अलग थालियोंमें तैयार रखा है। हम सबके सब काम पर गये थे, तब माता-जैसी यह सब मेहनत किसने की? मैंने बापूसे पूछा (अुन दिनों मैं अुनसे अंग्रेजीमें ही बोलता था) — 'यह सब किया किसने?' वे बोले — 'क्यों, मैंने किया है।' मैंने संकोचसे कहा — 'आपने क्यों किया? मुझे अच्छा नहीं लगता कि आप सब तैयारी करें, और हम बैठे खायें।'

'क्यों अुसमें क्या हर्ज है?' वे बोले। मैंने कहा—'आप सरीखोंकी सेवा लेनेकी हममें योग्यता तो हो।'

अिस पर बापूने जो, जवाब दिया, अुसके लिअे मैं तैयार नहीं था। मेरा वाक्य 'we must deserve it' सुनते ही बिलकुल स्वाभाविकतासे अुन्होंने कहा 'which is a fact.' मैं अुनकी ओर देखता ही रहा। फिर हँसते हँसते अुन्होंने कहा—'तुम लोग वहाँ काम पर गये थे और यहाँ नाश्ता करके फिर और काम पर ही जाओगे। मेरे पास खाली समय था। अिसलिअे तुम्हारा समय मैंने बचाया। अेक घण्टेका काम करके अैसा नाश्ता पानेकी योग्यता तो तुमने हासिल कर ही ली है न?'

जब मैंने कहा था we must deserve it, तो मेरा मतलब यह था कि अितने बड़े नेता और सत्पुरुषकी सेवा लेनेकी योग्यता तो हममें हो। लेकिन मेरी यह भावना अुनके दिमाग तक पहुँची ही नहीं। अुनके मनमें तो सब लोग अेक सरीखे। मैंने सेवा की, अिसलिअे अुनकी सेवा लेनेका हकदार बन गया।

३

सन् १९१४ की ही बात है। महायुद्ध छिड़ गया था। और गांधीजी हिन्दुस्तान लौटे नहीं थे। शान्तिनिकेतनमें जब मैं था, तो वहाँके आम रसोअी घरमें गेहूँकी रोटी नहीं बनती थी। सब लोग भात ही खाते थे। वहाँ दो तीन बंगाली लड़के थे, जो अजमेरकी तरफ़ रहे थे। अुनके लिअे थोड़ी रोटियाँ बनती थीं। पहले दिन जब मैंने रोटी माँगी, तो सबकी रोटियाँ मैं अकेला ही खा गया। रोटी अैसी बनी थी कि बिलकुल चमड़ा हो। अुसका नाम मैंने मोरेक्को लेदर (Moracco Leather) रखा था।

अुन दिनों मैं स्वभावसे ही बड़ा प्रचारक था। सबके आहारमें भात कम और रोटी ज्यादा हो, यह मेरा आग्रह था। मेरे प्रचारके फलस्वरूप पाँच अध्यापक और ग्यारह विद्यार्थी अलग रसोअी करनेके लिअे तैयार हो गये। मैंने अुस दलका नाम रखा था Self-helpers' Food Reform League (स्वावलम्बियोंका भोजन सुधारक

मण्डल)। हम सब मिलकर अपने हाथसे पकाते थे, बरतन भी माँजते थे, और मसाले आदिका व्यवहार नहीं करते थे। रोटी तो मुझे ही बनानी पड़ती थी। वह अैसी अच्छी बनती थी कि लीगके बाहरके आदमी भी खाने आते थे। हमारे क्लबमें संतोष बाबू मजूमदार थे। वे अमेरिकासे अध्ययन करके आये थे। मैंने अेक दिन कहा कि बरतन माँजनेसे और कमरा साफ करनेसे हमारी आत्मा भी साफ होती है। वे हँस पड़े और कहने लगे — 'हृदयको साफ करना अितना आसान नहीं है।'

कुछ भी हो हम लोगोंका बन्धुभाव खूब बढ़ा। शान्तिनिकेतनने हमें अपने प्रयोगके लिअे पूरा सुभीता कर दिया था।

जब गांधीजी वहाँ आये, तो अुन्होंने हमारा यह कार्य देखा। बड़े खुश हुअे किन्तु अुनका स्वभाव तो बड़ा ही लोभी। कहने लगे — 'यह प्रयोग अितने छोटे पैमानेपर क्यों किया जाता है? शान्तिनिकेतनका सारा रसोअीघर ही अिस स्वावलम्बन तत्त्वपर क्यों नहीं चलाया जाता?'

बस, 'दक्षिण अफ्रीकाके विजयी वीर तो ठहरे। वहाँके अध्यापकोंको और व्यवस्थापकोंको बुलवाया और अुनके सामने अपना प्रस्ताव रखा। वे बड़े संकोचमें पड़े। अितने बड़े मेहमानको क्या जवाब दिया जाय? गांधीजीकी यह जल्दबाजी मुझे अनुचित-सी लगी। मैंने कहा — 'मेरा छोटासा प्रयोग चल रहा है। अगर अुन्हें पसन्द आयेगा, तो धीरे धीरे अैसे क्लब और भी बन जायँगे।' मैंने यह भी कहा कि 'दो सौ आदमियोंका आम रसोअी-घर नये ढंगसे चले न चले। अिससे बेहतर यह होगा कि यहाँ पर पच्चीस पच्चीस या तीस तीस आदमियोंके छोटे छोटे क्लब बन जायें।'

कर्मवीर मेरा प्रस्ताव थोड़े ही कबूल करनेवाले थे! कहने लगे — 'अगर आठ क्लब बनाओगे तो तुम्हें कमसे कम सोलह expert (विशेषज्ञ) चाहियें। अितने हैं तुम्हारे पास? बड़ी बड़ी फौजें जैसे काम करती हैं, वैसे ही हमें करना होगा और साथ मिलकर काम करने और साथ खानेकी आदत डालनी होगी। अगर छोटे छोटे क्लब ही बनाने हैं, तो कुछ महीनोंके बाद बना सकते हो। आज तो आम रसोअी ही चलानी होगी।'

अुनकी दलील ठीक थी। मैं चुप हो गया। लेकिन मैंने मनमें कहा — 'संस्था न आपकी है, न मेरी; और गुरुदेव भी (शान्तिनिकेतनमें रविबाबूको गुरुदेव कहते थे) अिस समय यहाँ नहीं हैं। अितना बड़ा अुत्पात आप क्यों करने जा रहे हैं?'

बापूने श्री जगदानन्द बाबू और शरद बाबूको बुलवाया और पूछा कि 'यहाँ रसोअिये और नौकर मिलकर कुल कितने आदमी हैं?' जब अुन्हें पता चला कि करीब पैंतीस, तो बोले — 'अितने नौकर क्यों रखे जाते हैं? अिन सबको छुट्टी दे देनी चाहिये।' व्यवस्थापक बेचारे दिङ्मूढ़ हो गये। अुन्हें सीधे कहना चाहिये था कि हम अेकाअेक अैसा नहीं कर सकते। किन्तु अुन्होंने देखा कि मि० अेंड्रयूज़ और पियर्सन बापूके प्रस्तावके पक्षमें हैं, और गुरुदेवके दामाद नगीनदास गांगोली भी अुसी प्रभावमें आ गये हैं; और विद्यार्थी तो ठहरे बंदर। किसी भी नयी बातका खफ्त अुन पर आसानीसे सवार हो जाता है। सारा वायुमंडल अुत्तेजित हो गया। मैंने देखा कि मि० अेंड्रयूज़को स्वावलम्बनका अितना अुत्साह नहीं था जितना ब्राह्मण जातिके रसोअियेको निकाल देनेका। विश्व-कुटुम्बमें विश्वास करनेवाली अितनी बड़ी संस्थामें ये ब्राह्मण रसोअिये अपनी रूढ़ि चलाते और किसीको रसोअीघरमें पैठने नहीं देते।

लेकिन हम लोग सामाजिक या धार्मिक सुधारके खयालसे प्रेरित नहीं हुअे थे; हमें तो जीवन सुधारकी ही लगन थी।

तय हुआ कि बापू विद्यार्थियोंको अिकट्ठा करके पूछें कि अैसा परिवर्तन अुन्हें पसन्द है या नहीं। क्योंकि, नौकरोंके चले जाने पर काम तो अुन्हींको करना था। मि० अेंड्रयूज़ बापूके पास आकर कहने लगे — 'मोहन, आज तो तुम्हें अपनी सारी वक्तृता काममें लानी पड़ेगी। लड़कोंको अैसी जोशीली अपील करो कि लड़के मंत्रमुग्ध हो जायँ। क्योंकि तुम्हारी अिस अपील पर ही सब कुछ निर्भर है।' बापूने कुछ जवाब नहीं दिया।

विद्यार्थी अिकट्ठे हुअे। हम लोग तो गांधीजीकी जोशीली अपील सुननेकी अुत्कण्ठासे अपना हृदय कानमें लेकर बैठ गये।

और हमने सुना क्या? ठंडी मामूली आवाज़; और बिलकुल व्यवहारकी बातें। न अुसमें कहीं वक्तृता थी, न कहीं जोश। न भावुकता (sentiment) को अपील थी, न बहुत अूँची या लम्बीचौड़ी फलश्रुति।

तो भी अुनके वचन काम कर गये । जिन विद्यार्थियोंको मैं अच्छी तरह जानता था कि वे शौकीन और आरामतलब हैं, वे भी अुत्साहमें आ गये और अुन्होंने अपनी राय अिस प्रयोगके पक्षमें दी ।

अब व्यवस्थापकोंने अपनी अेक आखरी किन्तु लूली कठिनाअी पेश की । कहने लगे — 'नौकरोंको आजके आज नौकरीसे मुक्त करना हो तो अुनको तनखाह देनी पड़ेगी। पैसे लाने पड़ेंगे। अिस वक्त खज़ानचीके पास नहीं हैं।' गांधीजीके पास होते तो वे तुरन्त दे देते । वे यहाँ मेहमान थे, किससे माँग सकते थे ? अुनके आश्रमवासी भी आश्रमके मेहमान ही ठहरे। अुनके पास कुछ नहीं था। मि० अेंड्रूज़के पास भी अुस वक्त कुछ नहीं था । मैं था अेक घूमनेवाला परिव्राजक । तो भी पता नहीं कैसे गांधीजीने मुझसे पूछा —'तुम्हारे पास कुछ हैं ?' मैंने कहा — 'हैं।' मेरे पास करीब दो सौ रुपये निकले। मैंने अुन्हें दे दिये । फिर क्या ! नौकरोंको तनख्वाह दे दी गयी, और वे आश्चर्यचकित होकर चले गये । अब सवाल अुठा, रसोअीघरका चार्ज कौन ले । मेरी तो फुड रिफार्मसे लीग चल ही रही थी। गांधीजीने मुझसे पूछा —'लोगे ?' मैंने अिन्कार किया । आत्मविश्वासके अभावके कारण नहीं, अिस प्रयोग पर मेरी अश्रद्धा थी सो भी नहीं, किन्तु मैं जानता था कि यह सारी अनधिकार चेष्टा है । मैंने कहा —'मेरा छोटासा प्रयोग चल रहा है। अुससे मुझे सतोष है । अितना बड़ा व्यापक परिवर्तन अेकाअेक करना मुझे ठीक नहीं जँचता ।' लेकिन अिस तरह गांधीजी रुकनेवाले थोड़े ही थे। और अुनका भाग्य भी कुछ अैसा है कि अगर अेक आदमीने अिन्कार किया, तो अुनका काम करनेके लिअे दूसरा कोअी न कोअी अुन्हें मिल ही जाता है । मेरे मित्र राजंगम् अथवा हरिहर शर्मा शान्तिनिकेतनमें ही काम करते थे। अिन्हें हम अण्णा कहते थे। वे तैयार हो गये। कहने लगे —'मैं चार्ज लूँगा।' अब सवाल आया, मदद कौन करेगा । तब मैंने कहा —'जब मेरे मित्र कोअी काम अुठाते हैं, तब मदद करना मेरा धर्म होता है । मैं यथाशक्ति मदद करूँगा।' गांधीजीने कहा —'तुम्हारा प्रयोग जो छोटे पैमाने पर चल रहा है, अुसका अिस बड़े प्रयोगमें विसर्जन करो और सारी शक्ति अिसीमें लगा दो।'

वैसा ही किया गया। और फिर मैं तो राक्षस जैसा काम करने लगा। बारह-अेक बजे यह सब तय हुआ होगा। तीन बजे हमने चार्ज लिया और शामको लड़कोंको खिलाया। गांधीजी स्वयं आकर काम करने लगे। शाक सुधारनेका काम अुन्होंने किया। रोटियाँ तैयार करनेका काम मेरा था। मेरी रोटियाँ अितनी लोकप्रिय हुअीं कि जहाँ छह रोटियाँ बनती थीं, वहाँ दो सौ बनने लगीं। पत्थरके कोयलेके चूल्हे, अुनपर लोहेकी गरम चादरें, और अुनपर मैं दो दो रोटियाँ अेकपर अेक रखकर हिराफिरा कर सेंकता था। अिस तरह चार जुफ्त याने अेक साथ आठ रोटियोंकी ओर मैं ध्यान देता था। विद्यार्थी रोटियाँ बेलबेलकर मुझे देते थे। गूँधनेका काम चिंतामणि शास्त्री कर देते थे। सुबहका नाश्ता दूध केलेका था। बर्तन माँजनेके लिअे भी बड़े विद्यार्थियोंकी अेक टुकड़ी तैयार हो गयी थी। अुनका भी सरदार मैं ही था। बर्तन माँजनेवालोंका अुत्साह कायम रहे, अिसलिअे वहाँपर कोअी विद्यार्थी अुन्हें कोअी रोचक अुपन्यास पढ़कर सुनाता था, कभी कोअी सितार बजाता था। मेरी यह योजना शान्तिनिकेतनवाले रसिक अध्यापकोंको बहुत ही अच्छी लगी।

अिस तरह दो–चार दिन गये और गांधीजी अपने मित्र डाक्टर प्राणजीवन मेहतासे मिलनेके लिअे बर्मा (ब्रह्मदेश) जानेके लिअे तैयार हो गये। हरिहर शर्माने कहा—'मैं भी अिनके साथ जाअूँगा।' (शर्माजी पहले डा० प्राणजीवन मेहताके यहाँ लड़कोंके टयूटर रह चुके थे।) मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैं शिकायत करने गांधीजीके पास गया। गांधीजीने मेरा काम तो देखा ही था। अुन्होंने ठंढे पेटे मुझे कहा,— 'तुम तो सब कुछ चला सकोगे। लेकिन अगर तुम्हारी अिच्छा है, तो अण्णाको चार छह दिनके लिअे यहाँ रख जाअूँ। वे मेरे पीछे आयेंगे।' मैं और भी झल्लाया। मैंने कहा— 'जिम्मेदारी तो अुन्होंने ही ली थी। अब यह छोड़कर कैसे जा सकते हैं? और अगर अुन्हें जाना ही है, तो चार छह दिनकी मेहरबानी भी मुझे नहीं चाहिये। अगर अुन्हें कल जाना है, तो आज चले जायँ।'

गांधीजीने देखा था कि मैं तो नये प्रयोगमें रँगा हुआ हूँ। कुछ भी दया किये बगैर अुन्होंने कहा—'अच्छा, तब तो ये मेरे ही साथ जायँगे।' और सचमुच दूसरे ही दिन अण्णा गांधीजीके साथ चले गये!!

अिस प्रयोगका आगे क्या हुआ, सो यहाँ बतानेकी ज़रूरत नहीं। रवीन्द्रबाबू कलकत्तेसे आये। अुन्होंने अिस प्रयोगको आशीर्वाद दिया। कहा कि अिस प्रयोगसे संस्थाको और बंगालियोंको बड़ा लाभ होगा।

धीरे धीरे नावीन्य कम होता गया। लड़के थकने लगे। मि० पियर्सनने भी मेरे पास आकर कहा—'काम तो अच्छा है, लेकिन पढ़ने लिखनेका अुत्साह नहीं रह जाता है।' बड़ी बहादुरीसे हमने चालीस दिन तक अिसे चलाया। फिर छुट्टियाँ आ गयीं। छुट्टियोंके बाद किसीने अिस प्रयोगका नाम भी नहीं लिया। मैं भी शान्तिनिकेतन छोड़कर चला गया।

४

थोड़े ही दिनोंमें गांधीजी बर्मासे लौटे। हमारा प्रयोग चल ही रहा था। अितनेमें पूनासे तार आया: गोखलेजीका देहान्त (फरवरी १९१४) हो गया। गांधीजीने तुरन्त पूना जानेका तय किया। अिसके पहले गोखलेजी अुनसे कहते थे—'सर्वेण्ट्स आफ अिण्डिया सोसायटीके सदस्य बनो।' लेकिन गांधीजीने निश्चय नहीं किया था। अपने राजकीय गुरुकी मृत्युके पश्चात् अुनकी यह अंतिम अिच्छा गांधीजीके लिअे आज्ञाके समान हो गयी। वे पूना गये, और सर्वेंट्स आफ अिण्डिया सोसायटीमें प्रवेश पानेके लिअे अर्ज़ी दे दी।

अर्ज़ी पाकर गोखलेजीके अन्य शिष्य घबरा गये। वह सारा किस्सा नामदार शास्त्रीजी ने दोतीन जगह अपनी अप्रतिम भाषामें वर्णन किया है। अुसे यहाँ देनेकी ज़रूरत नहीं। सार यह था कि वे जानते थे कि गांधीजीको वे हजम नहीं कर सकेंगे। किन्तु गोखलेजीके ही (creed) (राजनीतिक सिद्धान्तों) को गांधीजी मानते थे। अैसी हालतमें अुनकी अर्ज़ी अस्वीकार कैसे की जाय, अिसी असमंजसमें वे पड़े थे। परिस्थिति ताड़कर गांधीजीने ही अपनी अर्ज़ी वापिस ले ली और अपने गुरुभाअियोंको संकटसे मुक्त कर दिया। फिर भी अवैधरूपसे सोसायटीके जलसोंमें वे अुपस्थित रहते, और संस्थाको अुन्होंने समय समय पर मदद भी काफ़ी दी।

गोखलेजीके देहान्तका समाचार सुनते ही गांधीजीने अेक सालके लिअे जूते न पहननेका व्रत लिया। अिस कारण अुन्हें काफ़ी तकलीफ़ हुअी। किन्तु अुन्होंने यह व्रत अच्छी तरहसे निबाहा।

५

जब बापू बर्मासे लौटे, तो रवि बाबू शान्तिनिकेतनमें थे। भारतके दो बड़े पुत्र किस तरह मिलते हैं, यह देखनेके लिअे हम सब अध्यापकगण अत्यन्त अुत्सुक थे। मि० अेंड्र्यूज़ हमारी यह अुत्कण्ठा क्या जानें! अुन्होंने तो मानो अपने गुरुदेव और अपने मोहनका ठेका ही ले लिया था। वे हममेंसे किसीको अंदर कमरेमें जाने ही न दें। पुराने अध्यापक अिसपर बिगड़ गये और अंदर घुस ही गये। क्षिती बाबूने समझाया कि अिन बड़ोंका प्रथम मिलन हमारे लिअे अेक पुण्यप्रसंग (sacrament)–सा है। अुनकी खानगी बातें सुननेके लिअे हम अुत्सुक नहीं हैं। थोड़ा समय बैठकर हम चले जायेंगे। तब कहीं मोहनके चार्लीको तसल्ली हुअी।

दीवानखानेमें बापूके साथ हम गये। रविबाबू अेक बड़े कोच पर बैठे थे, खड़े हो गये। रविबाबूकी अूँची भव्य मूर्ति, अुनके सफेद बाल, लम्बी दाढ़ी, और भव्यता बढ़ानेवाला अुनका चोगा, सब कुछ प्रौढ़, सुन्दर था। अुनके सामने गांधीजी छोटीसी धोती और अेक कुरता और काश्मीरी टोपी (दुपल्ली) पहने हुअे जब खड़े हुअे, तब अैसा मालूम हुआ मानो सिंहके सामने चूहा खड़ा हो।

दोनोंके मनमें अेक दूसरेके प्रति हार्दिक आदर था। रविबाबूने गांधीजीको अपने साथ कोच पर बैठनेका अिशारा किया। गांधीजीने देखा कि जमीन पर गालीचा है ही, वे क्योंकर कोचपर बैठें। जमीनपर ही बैठ गये। रविबाबूको भी फर्शपर बैठना पड़ा। हम सब लोग कुछ समय तक अिर्दगिर्द बैठे रहे। मामूली कुशल प्रश्न हो गये और हम चले आये।

फिर तो वे दोनों अनेक बार मिले। संतोष बाबूने अेक दिन मुझे कहा — "अिन दोनोंके बीच अेक दिन आहारकी भी चर्चा छिड़ी थी। पूरी (लूची)की बात थी। गांधीजी तो केवल फलाहारी ठहरे। अुन्होंने

Hindi ११ Seminar Library

कहा — 'घी या तेलमें रोटी तलकर पूरी बनाते हैं, यह तो अन्नका विष बनाते हैं।' यह सुनकर रविबाबूने गंभीरतासे जवाब दिया— It must be a very slow poison. I have been eating *puris* the whole of my life and it has not done me any harm so far.' "

६

मि० अँड्रयूज़ अेक अद्वितीय व्यक्ति थे। अुनकी विद्वत्ता तो असाधारण थी ही। वे मिशनरी बनकर अिस देशमें आये, अिससे अुनका त्याग और सेवाभाव पूरा प्रतीत होता है। यहाँ आकर जब अुन्होंने देखा कि भारतकी सेवामें अपना मिशनरीपन अन्तरायरूप है और मिशनरी संस्थाका नियंत्रण भी केवल बन्धनरूप है, तब अुन्होंने अपना रेवरेंड पद छोड़ दिया और केवल मिस्टर अँड्रयूज़ रह गये। अुनमें हृदयकी असाधारण नम्रता थी। अेक दिन मेरे साथ खानगी बातचीतमें अुन्होंने कहा — 'मैं हिन्दुस्तानकी सेवा यहाँके लोगोंकी अिच्छाके अनुसार करना चाहता हूँ। अंग्रेज़ आये और यहाँके लोगोंका गुरु बन जाय, अैसी भूमिका मुझे नहीं लेनी है, (शायद अुनका अिशारा मिसेज़ अेनी बेसेंटकी तरफ था।) और मैं हिन्दू बनकर हिन्दुओंको अुनका धर्म सिखाने बैठूँ, यह भी मुझे नहीं करना है। (अिसमें अुनकी दृष्टिके सामने शायद सिस्टर निवेदिता थीं।) मैं तो भारतवासियोंका सेवक बनकर ही रहना चाहता हूँ।' और सचमुच वे वैसे ही रहे।

जब दक्षिण अफ्रीकामें बापूके सत्याग्रहने अुग्र स्वरूप ले लिया, तब अुनकी मददके लिअे यहाँसे मिस्टर अँड्रयूज़को भेजनेका गोखले आदिने तय किया। अपनी अपनी शुभ कामनाके साथ मिस्टर अँड्रयूज़को विदा करनेके लिअे मित्र लोग अिकट्ठे हुअे। हरअेकने अँड्रयूज़को यादगारके तौर पर कुछ न कुछ सौगात दी। अुनके मित्र पियर्सन भी अेक सौगात ले आये। हँसते हँसते कहने लगे — 'मैं तुम्हारे लिअे अेक अजीब भेंट लाया हूँ।' मिस्टर अँड्रयूज़ समझ नहीं पाये कि क्या चीज़ होगी। मिस्टर पियर्सनने

कहा — 'मैं तुम्हें अपनेको ही दिये देता हूँ। तुम्हारे साथ जाअूँगा और जितनी हो सके तुम्हारी मदद करूँगा।' दोनों दक्षिण अफ्रीका गये। अंग्रेज़ोंके बीच रहनेके कारण बापू अंग्रेजोंको झट पहचान लेते हैं। वहाँ जाते ही ये दोनों मित्र गांधीजीके भी मित्र बन गये। मिस्टर अेंड्रयूज़ने गांधीजीसे कहा — 'आयन्दा मैं तुम्हें मोहन कहूँगा, तुम मुझे चार्ली कहना।' तबसे अिन दोनोंका सम्बन्ध मा-जाये भाअियों-जैसा रहा। जब कभी मिस्टर अेंड्रयूज़ विदेशसे हिन्दुस्तान आते, तो कुछ दिन पहले नज़दीकके बन्दरसे To Mohan love from Charlie यह केबल (तार) भेजे बिना अुनसे नहीं रहा जाता। अिस तरहसे पैसा खर्च करना बापूको अखरता तो बहुत था, लेकिन अुनको मना करनेकी हिम्मत अुन्होंने कभी नहीं की।

मिस्टर अेंड्रयूज़का स्वभाव कुछ भुलकना था। नहाने जाते वहीं घड़ी भूल जाते। किसीसे कुछ लेते अथवा देते, वह भी अक्सर भूल ही जाते। अिसलिअे जब बापू अुन्हें कहीं भेजते तो ज्यादा पैसा देकर भेजते थे, और हँसकर कहते थे—'भूलकर खोनेके लिअे भी तो कुछ पैसा चाहिये।' वे कभी पैसेका हिसाब नहीं रखते थे। लौटने पर जेबमें कुछ पैसा बचता, तो अपने मोहनको वापिस दे देते थे।

मैंने देखा कि आगे जाकर मिस्टर अेंड्रयूज़ बापूको मोहन नहीं कह सके। हम लोगोंकी देखादेखी वे भी बापू ही कहने लगे।

७

१९१५ का दिसम्बर होगा। बम्बअीमें कांग्रेसका अधिवेशन था। बापू अपने आश्रमवासियोंको लेकर मारवाड़ी विद्यालयमें ठहरे थे। मैं अन्य जगह ठहरा था, लेकिन बहुतसा समय बापूके पास ही गुजारता था। अेक दिन अुन्हें कहीं जाना था। डेस्क परकी सब चीजें वे सँभालकर रखने लगे। देखा तो कोअी चीज़ वे ढूँढ़ रहे हैं, बड़े परेशान हैं। मैंने पूछा — 'बापूजी क्या ढूँढ़ रहे हैं?'

"मेरी पेन्सिल। छोटीसी है।"

अनके कष्ट और अनका समय बचानेके लिअे मैं अपनी जेबसे अेक पेन्सिल निकालकर अन्हें देने लगा। बापू बोले — 'नहीं नहीं, मेरी वही छोटी पेन्सिल मुझे चाहिये।' मैंने कहा — 'आप अिसे लीजिये, आपकी पेन्सिल ढूँढ़कर मैं रखूँगा। आपका वक्त नाहक ज़ाया होता है।' अिस पर बापूने कहा — 'वह छोटी पेन्सिल मैं खो नहीं सकता। तुम्हें मालूम है, वह तो मुझे मद्रासमें नटेसनके छोटे लड़केने दी थी! कितने प्यारसे ले आया था वह! अुसे कैसे खो सकता हूँ?'

फिर हम दोनोंने अुस शरारती पेन्सिलकी तलाश की। कहीं छिप गयी थी। जब मिली तब बापूको शान्ति हुअी। मैंने देखा दो अिंचसे कुछ कम ही होगी। अितनी छोटीसी पेन्सिल प्यारसे बापूको देनेवाले अुस लड़केका चित्र मैं अपने मनमें खींचने लगा।

८

शान्तिनिकेतनमें मैं बापूके काफी परिचयमें आया था। वहाँ अुनके आश्रमवासी ठहरे थे। अुनके बीच रहकर मानो मैं अुन्हींका हो गया था। अुन दिनों बापूके बड़े लड़के हरिलाल अुनसे मिलने आये थे। अुनके साथ भी मेरा परिचय हो गया था।

बम्बअी कांग्रेसके समय मारवाड़ी विद्यालयमें शामकी प्रार्थनाके बाद बापू कुछ लिखने बैठे थे। मैं भी पास ही बैठकर कुछ पढ़ रहा था। अितनेमें हरिलाल मेरे पास आकर बैठ गये। मुझे पूछने लगे — 'काका, आप तो शान्तिनिकेतनमें बापूके परिचयमें अितने आये थे और फिनिक्स पार्टीके लोगोंके साथ अितने हिलमिल गये थे कि हम मानते थे कि गांधीजीके आश्रममें आप कबसे शरीक हो गये होंगे। आश्चर्य है कि अभी तक आप दूर ही रहे!' मैंने जवाब दिया— 'बापूके प्रति मेरा जो आकर्षण है, सो तो आप जानते ही हैं। लेकिन मैं अुनके पास कैसे जा सकता हूँ? हिमालयकी यात्रा पर जानेके पहले जिनके साथ मैं राष्ट्रसेवाका काम करता था, अुनका मेरे अूपर अधिकार है। वे अगर कोअी नया कार्य शुरू करें, तो मुझे चाहिये कि अपनी

सेवा अुन्हीको दूँ; नहीं तो वे नये नये आदमी ढूँढ़ते फिरें और मैं जहाँ आकर्षण बढ़ा, वहाँ नये Boss पकड़ता फिरूँ। यह क्या अच्छा होगा!'

बापू अपने लेखन कार्यमें तल्लीन थे। अिसलिअे हम धीरे धीरे बातें कर रहे थे। अित्तफाकसे बापूने हमारे प्रश्नोत्तर सुन लिये। अुनसे रहा न गया। कहने लगे — "काका, तुम्हारा विचार 'सोना मुहर' के जैसा है।" फिर हरिलालकी ओर मुँह करके कहने लगे — 'अगर हिन्दुस्तानमें सब कार्यकर्ता अैसी ही परस्पर निष्ठासे काम करें, तो हमारा बेड़ा पार होनेमें देर नहीं लगेगी।'

मैंने सिर नीचा कर लिया। मनमें अितना प्रसन्न हुआ! और कुछ अभिमान भी हुआ कि मुझमें भी कुछ है। अुसी क्षण मैं पूराका पूरा बापूका हो गया।

बम्बअीकी कांग्रेस खतम होनेके बाद मैं बड़ोदा गया और वहाँसे चार पाँच मीलपर सयाजीपुरा नामके अेक देहातमें ग्रामसेवाका कार्य करने लगा। जब बापूको मालूम हुआ कि 'हालाँकि मैं बैरिस्टर केशवराव देशपांडेके मातहत काम कर रहा हूँ, फिर भी मेरे लिअे वहाँ कुछ विशेष काम नहीं है, तो अुन्होंने स्वयं देशपांडेजीको पत्र लिखा कि 'काकाका आप कुछ विशेष अुपयोग नहीं कर रहे हैं और आश्रममें हम अेक राष्ट्रीय शाला खोलना चाहते हैं, तो काकाको हमें दे दीजिये'।'

देशपांडे साहब मुझे अहमदाबाद ले गये और कहा — 'हम जो गंगनाथ राष्ट्रीय शाला चलाते थे, अुसीका यह व्यापक स्वरूप समझो और यहाँ रह जाओ।' जिस तरह कन्याको मातापिता सुसराल भेजते हैं, अुसी तरह वे मुझे गांधीजीके आश्रममें पहुँचा गये।

मैं आया और अेकाअेक गांधीजी चंपारनकी ओर चले गये। बड़ोदेका काम बिगड़े नहीं, अिसलिअे अंतिम व्यवस्था करनेके लिअे मैं फिरसे चार दिनके लिअे बड़ोदा गया। आश्रमके व्यवस्थापकोंने गांधीजीको लिखा होगा कि काका बड़ोदा गये हैं। बस, वहाँसे फौरन दो खत आये, अेक मेरे पास और अेक देशपांडे साहबके पास। देशपांडे साहबको लिखा था कि 'आपने काकाको दे दिया है, अब आपका अुनपर कोअी अधिकार नहीं रहा। अुन्हें

आप अिस तरह नहीं बुला सकते।' मुझे लिखा कि 'मनुष्य दो जिम्मेदारियाँ साथ साथ नहीं चला सकता।' मुझे बहुत बुरा लगा। मैंने कैफियत तो भेजी, लेकिन सोचा कि अितना बस नहीं है। तबसे करीब अेक साल तक आश्रम भूमि छोड़कर कहीं बाहर भी नहीं गया। शामको घूमनेके लिअे जो कुछ बाहर जाता था अुतना ही। फिर गांधीजीको विश्वास हो गया कि अिसकी निष्ठामें अेकाग्रता है। फिर तो स्वयं मुझे अपने साथ मुसाफिरीमें अेक दो जगह ले गये।

गांधीजीने जब चंपारनमें सत्याग्रह शुरू किया, तब मुझसे रहा न गया। मैंने अुन्हें लिखा कि मुझे आने दीजिये, मैं वहाँके आन्दोलनमें और सत्याग्रहमें शरीक होअूँगा। जवाब आया — 'तुम तो जूने जोगी हो। राष्ट्रसेवाका काम तुम्हारे लिअे कोअी नअी चीज नहीं है। वहाँका काम छोड़कर यहाँ आकर जेलमें जा बैठोगे, तो तुम्हारे लिअे वह तपस्या नहीं होगी बल्कि स्वच्छन्द होगा। नये लोगोंको मैं यह मौका देना चाहता हूँ। तुम अपना काम वहाँ अेकाग्रतासे करते रहो।'

९

श्री किशोरलालभाअी मशरूवाला अकोलामें वकालत करते थे। श्री ठक्कर बापाका अुनपर कुछ प्रभाव था। मशरूवालाजीने सोचा कि देशसेवाका अच्छा मौका है। वे चंपारनमें गांधीजीके पास चले गये, क्योंकि गांधीजीने स्वयंसेवकोंके लिअे अपील की थी। गांधीजीने देखा कि अिनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। अिन्हें दमाकी व्यथा है; साथ साथ यह भी देखा कि मसाला अच्छा है। थोड़ी बातचीत होते ही कहा — 'तुम्हारा काम यहाँ नहीं है, आश्रममें मैंने अेक शाला खोली है, वहाँ सॉकळचन्दभाअी है, काका हैं, फूलचन्द और पोपटलाल हैं, अुनकी मददको जाओ। आज ही जाओ यहाँसे। यहाँ रहोगे तो मुझे तुम्हारी चिंता करनी पड़ेगी और मुझपर नाहक बोझ होगा। अिसलिअे आज ही जाओ।

क्या करते? सीधे आ गये आश्रम, और कायमके हो गये गांधीजीके।

१०

१९१६–१७ में बापूजी गुजरातमें आकर बसे और 'हम भी कुछ हैं' अैसी अस्मिता गुजरातमें जाग्रत हुअी। अिसके पहले बम्बअी प्रांतीय कान्फरेन्सके अधिवेशन हुआ करते थे, जिनमें सिंधी, गुजराती, महाराष्ट्रीय, और कर्नाटकी सब प्रान्तोंके लोग आते थे। देशके सरकारी प्रान्त ही कांग्रेसके प्रान्त थे। यह जानकर कि गांधीजी भाषाके अनुसार प्रांत बनानेके पक्षमें हैं, चन्द गुजराती कार्यकर्ताओंने गुजरात प्रांतीय पोलिटिकल कान्फरेन्सकी स्थापना करनी चाही। वे गांधीजीके पास आये। गांधीजीने अपनी शर्तें यानी अपनी कार्यपद्धति अुनके सामने रखी। कार्यकर्ताओंने अुसे स्वीकार किया; तब गांधीजीने अध्यक्ष बनना मंजूर किया।

खूबी यह थी कि किसीको यह खयाल भी नहीं हुआ कि हम जो बम्बअी प्रांतीय कान्फरेन्सका अिस तरह विकेन्द्रीकरण करने जा रहे हैं, अुसकी अिजाजत लेनी चाहिये, या कांग्रेसको पूछना चाहिये। अुन दिनों कांग्रेस अितनी संगठित नहीं थी।

कान्फरेन्सका 'गुजरात राजकीय परिषद्' यह शुद्ध देशी नाम रखा गया। परिषद् गोधरामें हुअी। गांधीजी सभामें समय पर पहुँच गये। अुनका भाषण गुजरातीमें था। परिषद्के लिअे श्री लोकमान्य भी बुलाये गये थे। वे अपनी आदतके मुजब परिषद्में कुछ देरसे आये। गांधीजीने बड़े आदरके साथ अुनका स्वागत किया। लेकिन साथ साथ अितना कहे बिना न रहे कि लोकमान्य आधा घंटा देरसे आये हैं। अगर स्वराज्य प्राप्त करनेमें आधे घण्टेकी देर हुअी, तो अुसके लिअे लोकमान्य जिम्मेवार गिने जायँगे।

११

मैं भी बापूके साथ गोधरा गया था। विषय-निर्वाचिनी कमेटीमें चर्चाके लिअे वहाँके कार्यकर्ताओंने प्रस्तावोंके ड्राफ्ट बनाकर गांधीजीके सामने रख दिये।

अुनमें पहला प्रस्ताव था — 'हम हिन्दके बादशाहके प्रति राजनिष्ठा जाहिर करते हैं, अित्यादि।' अुस जमानेमें हर राजकीय सभाका मंगलाचरण अैसे ही प्रस्तावोंसे हुआ करता था।

गांधीजीने प्रस्ताव पढ़ा और फाड़ डाला। कहने लगे — 'अैसा प्रस्ताव पास करना बेहूदापन है। जब तक हम बगावत नहीं करते, हम राजनिष्ठ हैं ही। अुसके अैलान करनेकी जरूरत ही क्या? किसी स्त्रीने कभी अपने पतिके पास अपने पतिव्रता होनेका अैलान किया है? अुसने शादी की है, अुसका अर्थ ही यह है कि वह पतिव्रता है।'

कार्यकर्ता अवाक् हो गये। अुनकी मुद्रा देखकर बापूने कहा — 'अगर आपको किसीने पूछा कि राजनिष्ठाके प्रस्तावका क्या हुआ, तो बेशक मेरा नाम लेकर कहिये कि गांधीने रोक दिया।'

१२

अुस परिषद्में शायद विरमगामके बारेमें अेक प्रस्ताव पास हुआ था, जिसे अध्यक्षकी हैसियतसे गांधीजीको वायसरायके पास भेजना था। गांधीजीने तुरन्त अेक तार लिखवाया, जिसके नीचे अपने नामके बाद "अध्यक्ष, गुजरात राजकीय परिषद्" ये शब्द रखे। मैंने कहा — "बेचारा वायसराय ये देशी शब्द क्या जाने 'अध्यक्ष, गुजरात राजकीय परिषद्'!" बापूने जवाब दिया — "अगर अुन्हें यहाँ राज करना है तो हमारी अितनी भाषा वे सीख लें, या किसी दुभाषियेको अपने पास रखें, जो अुन्हें समझाया करे। अपनी गरजसे ही तो राज कर रहे हैं।"

आखिर तार वैसा ही गया, और अुसका जवाब भी ठीक ठीक मिला।

१३

गोधरा परिषद्‌के कुछ ही दिन पहले महादेवभाअी देसाअी गांधीजीके पास आये। अुनके अेक घनिष्ठ मित्र श्री नरहरि परीख आश्रमकी शालामें आ चुके थे। दोनोंने मिलकर रविबाबूकी अेक दो बंगाली कृतियोंका गुजरातीमें अनुवाद किया था।

महादेवभाअीने अेल-अेल० बी० पास करनेके बाद वकालत नहीं की। कुछ दिन ओरिअेण्टल ट्रॅन्स्लेटर्स आफिस बम्बअीमें काम करते रहे। अुसके बाद सर लल्लूभाअी शामळदासकी सिफारिशसे को-ऑपरेटिव सोसायटीके अिन्सपेक्टर बने। फिर किसीके प्रायवेट सेक्रेटरी रहे। अब अुन्हें बापूकी ओर आकर्षण हुआ। वे अुनसे मिलने गोधरा ही आये। कहने लगे — 'अगर आप मुझे साथमें लें, तो मैं आपके सेक्रेटरीका काम कर सकूँगा।' अुन्होंने अपने पुराने Boss के लिअे तैयार किया हुआ अेक अंग्रेजी व्याख्यान भी बताया। अुनके अक्षर तो मोतीके दानों जैसे थे। अुनके चेहरेपर जवानी और निर्मलता तो टपक ही रही थी। अुन्होंने कोअी दस-पंद्रह मिनट बातें की होंगी।

पता नहीं बापू अिन बातोंसे प्रभावित हुअे या फिर अुन्होंने महादेव-भाअीकी विरली आत्माकी खूबी पहचान ली, अुन्होंने अुसी समय कह दिया — 'तुम मेरे साथ आ सकते हो।' महादेवभाअीने बीस बरसके लिअे अपनी सेवा देनेका वादा किया। बस, अितनेमें ही दो आत्माओंकी शादी हो गयी। महादेवभाअीने पूछा — 'मैं कबसे काम शुरू करूँ!' बापूने कहा — 'तुम्हारा काम शुरू हो चुका। यहींसे मेरे साथ मुसाफिरीमें चलो।' महादेवभाअी कहने लगे कि घर होकर आअूँ तो अच्छा हो। बापूने कहा — 'नहीं, कोअी जरूरत नहीं, यह सब बादमें हो सकेगा।'

कुछ दिन बाद महादेवभाअीसे मेरी बातें हो रही थीं। वे कहने लगे — "अेक वक्त बापूजी किसीसे मिलने गये। वे तो कुर्सी पर बैठ गये, मैं फर्श पर ही बैठा। बापू बोले — 'यह ठीक नहीं; मेरे साथ दूसरी कुर्सी पर बैठो।' मेरी हिम्मत न हुअी। तब अुन्होंने डाँटकर कहा — 'जमानेका ढंग भी तुम्हें सीखना चाहिये। अुठो; बैठो अिस कुर्सी पर।' मैं शर्माता शर्माता अुठकर कुर्सीपर बैठ गया।"

मैंने हँसते हुअे कहा — 'नववधूके जैसे ही न!'

१४

गोधरासे हम लोग आश्रम लौटे। बापू अपना कहींका दौरा पूरा करके आये। अुनके लिअे आश्रममें कोअी कमरा नहीं था। हम सब बाँसकी चटाअियोंकी झोंपड़ियोंमें रहते थे, जो हमें न धूपसे बचा सकती थीं न बारिशसे। बुनाअीका काम चलानेके लिअे अींट और खपरैलकी अेक चौरस पड़छी बनाअी गयी थी। अुसीके अेक कोने पर बापूजीके लिअे अेक कमरा खाली किया गया। महादेवभाअीको तो जगह मिलती कहाँसे? अुनका सारा असबाब पड़छीमें पड़ा रहा। वे अिधर अुधर दिन काटने लगे। अेक दिन हवा आअी और अुनका 'मॉडर्नरिव्यू' मासिक पत्र अुड़ गया। फिर तो हम लोगोंको अपने झोंपड़ोंमें ही अुनके लिअे कुछ व्यवस्था करनी पड़ी।

शामका वक्त था। हम प्रार्थनाके लिअे अिकट्ठे हुअे। बापूजीने आया हुआ कोअी खत महादेवभाअीसे माँगा। महादेवभाअी तो अुसके टुकड़े टुकड़े करके रद्दीकी टोकरीमें फेंक चुके थे। वे झट अुठे और टोकरीमें कागजके टुकड़े ढूँढ़ने लगे। वे टुकड़े आसानीसे कैसे मिलते। बापूने कहा — 'जाने दो, अुसके बिना काम चल जायगा।' लेकिन महादेवभाअी थोड़े ही माननेवाले थे। अुन्होंने टोकरी जमीन पर औंधाअी और अुस खतका अेक अेक टुकड़ा बीनने लगे। बापू बहुत नाराज हुअे। बोले — 'यह क्या कर रहे हो महादेव? सब लोग प्रार्थनाके लिअे अिकट्ठे हुअे हैं, तुम्हारी राह देख रहे हैं। मैं कहता हूँ अुसके बिना चलेगा।' महादेवभाअीने सुनी-अनसुनी की। वे तो अपने बीने हुअे टुकड़े सिलसिलेसे जमाने लगे। अुनका कपाल पसीनेसे तर हो रहा था। जब सारा खत जम गया, और अुसकी नकल हो गयी, तब कहीं वे आकर हमारे साथ प्रार्थनामें शामिल हुअे।

बापूजीके काममें अुनकी अैसी और अितनी ही निष्ठा जीवनभर रही।

१५

साबरमतीके किनारे नये वाड़ज गाँवके पास आश्रमकी स्थापना हुअी। प्रारंभमें हम दो चार तंबुओंमें ही रहते थे। झोंपड़ियाँ अुसके बादमें बनीं।

आश्रम भूमि पर हम लोग आ पहुँचे हैं, अिसका समाचार सबसे पहले आसपासके चोरोंको मिला। वे रातको हमारे स्वागतके लिअे आने लगे। शरीफ़ लोग जब मिलने आते हैं, तो भेंट-सौगात दे जाते हैं। लेकिन चोरोंका कानून अुलटा है। वे कुछ न कुछ स्वेच्छासे भेंटमें ले जाते हैं। फलतः हमने रातको पहरा देना शुरू किया। मैं अक्सर रातको अेक बजेसे तीन बजे तक पहरा देता था। पहली रातकी कुछ नींद लेनेके बाद शरीर प्रसन्न रहता था और अुत्तर रात्रीकी गंभीर शान्ति ध्यानके लिअे अनुकूल रहती थी। अुपनिषद्के मंत्र बोलते बोलते मैं सारी भूमिका चक्कर लगाया करता था।

कुछ दिनके बाद अपने दौरेसे बापू लौटे। शामकी प्रार्थनाके बाद चर्चाके लिअे अुन्होंने चोरोंका सवाल ले लिया। काफी चर्चा हुअी। फिर बापू बोले — 'अगर मगनलाल (गांधीजीके भतीजे और आश्रमके व्यवस्थापक) चाहें तो मैं अुनके लिअे सरकारसे लाअिसेन्स लेकर बन्दूक खरीद दूँ, और अगर लोग अुनकी टीका टिप्पणी करेंगे कि ये अहिंसक लोग बंदूक क्यों रखते हैं, तो अुनको जवाब देनेके लिअे मैं यहाँ बैठा हूँ।'

अिस पर भी कुछ चर्चा हुअी। बापूने कहा — 'हम सब लोग — स्त्री, पुरुष, बालबच्चे — यहाँ भयभीत दशामें रहें, अिससे बेहतर है कि हम बंदूकसे अपनी रक्षा करें। भयग्रस्त मनुष्य अहिंसक हो ही नहीं सकता। मनसे निर्वीर्य हिंसा करते रहनेके बजाय हम चोरोंको डर दिखावें यही बेहतर है।'

अिस पर राय ली गयी। मैंने अिसका विरोध किया। सबको ताज्जुब हुआ। मैं महाराष्ट्रीय बापूसे भी बढ़कर अहिंसक कहाँसे हो गया, यही भाव सबके चेहरों पर था। मैंने कहा — 'अहिंसाके खयालसे मैं विरोध नहीं कर रहा हूँ। मेरी दलील है कि आज सरकारके दरबारमें

बापूजीकी कीमत है, वह बापूजीको अपना खैरख्वाह समझती है। अिसलिअे हमें अेककी जगह चार रायफलें मिल सकेंगी। किन्तु देशके करोड़ों किसानोंको ये हथियार कहाँसे मिलेंगे? हमारे किसानोंको बंदूकके बिना आत्मरक्षा करनी पड़ती है, अुसी मर्यादामें रहकर हमें भी अपनी रक्षा करनी चाहिये।'

बापूको मेरी दलील जँची होगी। बंदूकका प्रस्ताव वैसा ही रह गया।

अुसके बाद जब सरकारने बापूसे युद्ध कार्यमें मददके लिअे प्रार्थना की और बापूने खेड़ा जिलेमें रँगरूट भरतीका काम शुरू किया, तब अुन्होंने सरकारसे लिखा-पढ़ी करके खेड़ा जिलेके किसानोंको बंदूकके लाअिसेन्स भी काफी संख्यामें दिलवाये। जिस दिन मैंने यह बात सुनी, मुझे बड़ा संतोष हुआ।

१६

गुजरातमें गांधीजीके पास जो कार्यकर्ता सबसे प्रथम आये, अुनमें श्री शंकरलाल बैंकर और श्री वल्लभभाअी पटेल दो मुख्य थे। श्री विट्ठलभाअी पटेल भी शुरूसे गांधीजीके पास आये थे, लेकिन अुनके निकट सहवासमें नहीं।

गोधरामें जो प्रथम राजकीय परिषद् हुअी, अुसके साथ श्री ठक्कर बापाने (ये सरवेंट्स ऑफ अिण्डिया सोसायटीके अेक सीनियर मेंबर होनेके नाते स्वाभाविक ही गांधीजीके संपर्कमें आये थे और आते ही अुनकी घनिष्ठता भी हो गयी थी।) अेक अस्पृश्यता-निवारण-परिषद्का आयोजन किया। बापूने कहा — 'अस्पृश्यता-निवारण-परिषद् तो यहाँ ढेड़वाड़ेमें ही हो सकती है।' बात तय हो गयी। राजकीय परिषद्में ही घोषणा कर दी गयी। तारीख, समय और स्थान बतला दिया गया। सबको आमंत्रण भी दे दिया गया। लोग काफी तादादमें आये। परिषद्के बहाने ढेड़वाड़ेकी अच्छी सफाअी हो गयी। श्री विट्ठलभाअी पटेल भी अुसमें आये थे। अुनका स्वभाव तो वैसे कुछ नाटकी था ही। जब आये, तो अेक

लुंगी, लम्बा-सा कुरता और साधुओंका-सा कनटोप पहनकर आये। सभामें मंचका आयोजन नहीं था। गांधीजी अध्यक्षकी हैसियतसे किसी कुर्सी या पेटी पर खड़े हुअे। अुन्हें सहारा देनेके लिअे श्री विट्ठलभाअी खड़े हुअे। अुनके कंधे पर हाथ रखते हुअे बापूने कहा — 'अूपरी पोशाकसे मैं प्रभावित होनेवाला नहीं हूँ। कंधे पर हाथ तो रखने दे रहे हो, लेकिन दिलको भी टटोल लूँगा।'

अुस सभामें महाराष्ट्रके सर्व-प्रथम और सर्व-श्रेष्ठ हरिजन सेवक विट्ठलरामजी शिंदे भी आये थे। अुनका मेरा थोड़ा पूर्व परिचय था। सभाके बाद हम दोनों बातें करने बैठ गये। शिंदेजी कहने लगे — 'आपके गांधीजी हमें यहाँ टिकने दें यह आशा नहीं। कबसे अुनके साथ विचार-विनिमय करना चाहता हूँ। अपना अनुभव अुनके सामने रखना चाहता हूँ, किन्तु मेरी सुने ही कौन? वे तो तेजीसे आगे बढ़ना चाहते हैं। अपना ही अेक संगठन खड़ा करना चाहते हैं। काम है भी अितने जोरोंका कि अिनके खिलाफ कोअी शिकायत भी नहीं हो सकती। हमारे लिअे यहाँ स्थान नहीं। हम तो चले।'

अुसी परिषद्में तय हुआ कि यहाँ अंत्यज सेवाके लिअे अेक आश्रम खोला जाय।

आश्रम खुल गया। किन्तु योग्य संचालक नहीं मिला। यह सुनते ही मैंने अपने मित्र मामा साहब फड़केको वहाँ भेजा। वे मेरेसे पहले आश्रमके सदस्य हो चुके थे।

अुस दिनसे आजतक मामा साहब गोधरामें ही काम करते आये हैं। अगर तपस्वीकी अुपाधि किसीके योग्य है, तो वह अुन्हींको दी जा सकती है।

१७

शंकरलाल बैंकर और मामा साहब दोनोंके मुँहसे भिन्न भिन्न समय पर मैंने सुना है कि गांधीजीके साथ अुनका प्रथम परिचय कैसे हुआ।

शंकरलालजीका बयान है — "हम लोग बम्बअीमें राजनीतिक कार्य करते थे। विलसन कॉलेजमें पढ़ते थे। तभीसे हर शरारतमें कुछ न कुछ हिस्सा लेते ही। (शंकरलाल बैंकर और जीवतराम कृपलानी विलसन

कॉलेजमें समकालीन थे और कॉलेजके झगड़ोंमें अेक दूसरेसे परिचित हुअे थे।) मैं और अुमर सोभानी दोनोंने मिलकर होमरूल लीगका काम जोरोंसे चलाया था। अेक दिन सुना गांधी नामका कोअी आदमी देशमें आया है। वह कुछ करना चाहता है। अुसे हम कहाँ तक exploit कर सकते हैं, यह देखनेके लिअे हम अुसके पास गये।

"गांधीजी जमीन पर बैठे थे। हम कुर्सी पर जाकर बैठ गये। बड़े patronizing ढंगसे हमने बातें कीं। लेकिन जब लौटे, तो हम ही प्रभावित हो गये थे। अुन दिनों बम्बअीका Politics हमारे ही हाथमें था। सरकारने मिसेज़ बेसेंटको intern किया था। (गांधीजीके शब्दोंमें कहें तो दफ़न किया था) मैंने गांधीजीको अेक पत्र लिखा। गांधीजीने जवाब दिया — 'असह्य दुःख या अन्यायका अिलाज सत्याग्रहसे ही हो सकता है।' मैंने गांधीजीका यह पत्र प्रकाशित करके काफी आन्दोलन किया। गांधीजीने भी अुसमें मुझे काफ़ी प्रोत्साहन दिया। फलतः अेनी बेसेंट छोड़ दी गयीं।

"फिर रौलेट अेक्टका आन्दोलन आया। अुसी समयसे अुमर सोभानी और मैं गांधीजीके नेतृत्वमें आ गये। सत्याग्रह सभाकी स्थापना हुअी। गांधीजीका 'हिन्द स्वराज्य' बम्बअी सरकारने जब्त (proscribe) कर ही रखा था। (वह पुस्तक तब जब्त की गयी थी, जब गांधीजी दक्षिण अफ्रीकामें ही थे।) मैंने 'हिन्द स्वराज्य'की हजारों प्रतियाँ छपवाअीं और खुले आम बम्बअीके रास्तों पर बेचीं। लोगोंने मुँह माँगे दाम (fancy prices) देकर खरीदीं।

"बम्बअी सरकारने देखा कि दमनसे यहाँ काम नहीं चलेगा। तुरन्त ही अुसने रुख पलटा। अैलान किया गया कि 'जो 'हिन्द स्वराज्य' डरबन (दक्षिण अफ्रीका)में फिनिक्स प्रेसमें छपा है, वह हमने जब्त किया है। अिसके पुनर्मुद्रण पर हमें कोअी कार्रवाअी नहीं करनी है।' मैं तो खुशीसे अुछल पड़ा।" फिर कहने लगे — 'हम अिस बूढ़ेको exploit करने चले थे, लेकिन देखते हैं कि खुद ही अुसकी जालमें फँस गये हैं।'

सचमुच वे अैसे फँसे हैं कि शरारती Politics (राजनीति) तो सब गया किधर ही। अब सिर्फ खादीके काममें ही रमे रहते हैं।

१८

अेक वक्त श्री वल्लभभाअीको मैंने विद्यापीठमें विद्यार्थियोंके सामने भाषणके लिअे बुलाया था। बातचीत करते करते वे आत्मकथाके मूड (mood)में आ गये। अुन्होंने वही विषय ले लिया। कहने लगे — "विलायतसे लौटनेके बाद अपनी प्रैक्टिस और पैसे कमानेमें मशगूल रहा। देशकी राजनीतिका निरीक्षण तो करता था, लेकिन कोअी भी नेता आदर्श तक पहुँचनेवाला नहीं दिखाअी दिया। जितने थे सब बकवास करनेवाले। अिसलिअे मैं तो रोज शामको वकीलोंके क्लबमें जाता और ताश खेलता। सिगार बीड़ी फूँकना ही मेरा आनन्द था। अिस बीच यदि कोअी वक्ता आ ही निकलता, तो अुसकी दिल्लगी करनेमें बड़ा लुत्फ आता था।

"अेक दिन हमारे क्लबमें गांधीजी आये। अिनके बारेमें कुछ पढ़ा तो था ही। अिनका जो व्याख्यान हुआ, वह मैंने दिल्लगीकी वृत्तिसे ही सुन लिया। वे बातें करते थे, मैं सिगरेटका धुआँ निकालता था। लेकिन आखिरमें देखा कि यह आदमी बातें करके बैठनेवाला नहीं है, काम करना चाहता है। तब जाकर विचार हुआ कि देखें तो सही, आदमी कैसा है। मैंने अुनसे कुछ सम्पर्क बढ़ाया। अुनके सिद्धान्तोंका तो मैंने खयाल नहीं किया। हिंसा अहिंसासे मेरा कुछ मतलब नहीं था। आदमी सच्चा है, अपना जीवन सर्वस्व दे बैठा है, देशकी आज़ादीकी अिसे लगन लगी है, और अपना काम जानता है, अितना मेरे लिअे काफी था।

"खेड़ा जिलेमें महसूल तहकूबीका झगड़ा हमने चलाया। गुजरात सभा यह काम अपने सिर लेनेको तैयार नहीं थी। गांधीजीने आश्रममें सत्याग्रह-सभा स्थापित की और काम शुरू किया। अुस वक्तसे मैंने अपनी सेवा गांधीजीको अर्पण की। तभीसे अुनका होकर रहा हूँ। लोग मुझे अंध-अनुयायी कहते हैं, मुझे अुसकी शरम नहीं। जब मैंने अुनका नेतृत्व स्वीकारा था, तब यह भी सोच लिया था कि अिनके पीछे चलनेमें किसी दिन लोग मुँह पर थूकेंगे भी, अिसके लिअे भी तैयार रहना चाहिये। तबसे किसी भी समय मेरे मनमें विक्षेप नहीं आया है। वे रास्ता दिखाते हैं और अुनके कहे अनुसार काम करनेमें मैं विश्वास करता हूँ।"

१९

जब बापू हिन्दुस्तानमें आकर काम करने लगे, अुस वक्त सरकारके पास अुनकी बड़ी अिज्जत थी। अुसने अुन्हें कैसरे-हिन्द मेडल भी दिया था। जब मेडल आश्रममें आया, मैंने अुसे हाथमें लेकर देखा। सोनेका था, काफी मोटा था। अुसकी शकल दोनों ओरसे दबे हुअे अंडे-जैसी थी। मैंने कहा — 'बापू आपने साम्राज्यको बहुत मदद दी है। अुस साम्राज्य-निष्ठाके बदले आपको यह मिला है। सरकार आपको अपने जालमें फँसाना चाहती है।' बापू हँस पड़े। बोले — 'क्यों, तुम भी अैसा मानते हो?'

मैं नहीं जानता था कि कैसरे-हिन्द मेडल सिर्फ Humanitarian Service (मानव-दयाके काम) के लिअे दिया जाता है। बापूने मुझे बतलाया। मैंने फिर कहा — 'है तो बड़ा कीमती। आप शायद अिसे बेचकर अिसके पैसे देशसेवाके कार्यमें लगायेंगे। आप तो अैसी कअी चीज़ें बेच चुके हैं।' जवाब अितना ही मिला — 'नहीं, अिसे बेचनेका विचार नहीं है, पड़ा रहेगा।'

हम तो अिस तमगेकी बात भूल ही गये; और बापू गये चंपारन, कामके लिअे। वहाँके किसानोंके दुःखकी कहानी सुनकर अुन्हें जाँच करनी थी। वहाँकी सरकारने बापूको बिहार प्रान्त छोड़कर चले जानेकी आज्ञा दी। बापूने जवाब लिखा — 'अपने देश-भाअियोंकी सेवा करनेके लिअे आया हूँ। यहाँसे हटनेकी जिम्मेवारी मैं अपने सिर पर नहीं लेता।' अुस जवाबके साथ ही साथ बापूने आश्रममें भी खत लिखा कि 'सरकारका दिया हुआ तमगा आश्रममें पड़ा है, अुसे तुरन्त वायसरायके पास भेज दो। अगर मेरी सेवाकी कदर नहीं है, तो मैं अिसे कैसे रख सकता हूँ'।

बापूकी यह जागरूकता, जिसे बौद्ध परिभाषामें स्मृति कहते हैं, देखकर मुझे आश्चर्य है।

२०

अैसी ही अेक बात यहाँ याद आती है। अुसे भी यहीं पर दे दें।

१९२१ या २२में बापूको छह बरसकी सजा देकर यरवड़ा जेलमें रखा गया। वहाँ दो बरसके अन्दर अुन्हें (appendicites) जलोदर हो गया। सरकारने अुन्हें ऑपरेशनके लिअे पूनाके सेसून अस्पतालमें रख दिया। वे थे तो सरकारके कैदी ही, लेकिन मुलाकातके बारेमें ज्यादा सख्ती नहीं थी। अुसी समय मैं भी अपनी अेक सालकी सजा पूरी करके पूना पहुँचा। देखा तो अस्पतालमें बापू अस्पतालके कपड़ोंमें खटिया पर सोये हुअे हैं। विशेष आश्चर्य तो तब हुआ, जब कपड़े विलायती देखे। मैंने अिस पर पूछताछ की। मालूम हुआ बापूजी अस्पतालके सब नियमोंका पालन करना चाहते हैं। अस्पतालका नियम था कि मरीज अपने खुदके कपड़े नहीं पहन सकता। अुसे अस्पतालके दिये हुअे कपड़े ही पहनना चाहिये।

ऑपरेशन हो गया। बापू बहुत ही कमजोर हो गये थे। सबको चिन्ता थी ही। अैसे ही कुछ दिन गये। अेक दिन कर्नल मॅडॉकने आकर बापूसे कहा — 'सरकारका हुक्म आया है। मुझे कहते खुशी है कि आप रिहा हो गये। अब आप चाहे यहाँ रह सकते हैं, चाहे जा सकते हैं। मेरी मेडिकल सलाह है कि आपको और कुछ दिन यहीं रहना चाहिये।' अुस सलाहकी स्वीकृतिमें बापूने शायद अेकाध ही वाक्य कहा होगा। लेकिन अुसी वक्त पासके आदमीसे कहने लगे — 'मेरे ये कपड़े अुतार दो। मेरे निजी कपड़े ला दो। अब तो अेक क्षणके लिअे भी ये कपड़े बरदाश्त नहीं हो सकेंगे।'

मैं नहीं समझता कि काँटोंका कुरता होता तो भी बापू अितने व्यग्र हो अुठते। खादीके कपड़े पहने, तब कहीं जाकर शान्तिसे बातें करने लगे।

२१

हिन्दुस्तान भरके लोग जानते थे कि बापू केवल फल ही खाते हैं। हिन्दुओंके विचारसे फलाहारमें दूध भी शामिल है। बापूने जोरोंसे अिसका विरोध किया है। अुनका कहना है कि दूधका आहार फलाहार तो है ही नहीं, वह तो महज मांसाहार है। रक्त, मांस, मज्जाके सत्वसे ही दूध बनता है। वह फलाहारमें नहीं आ सकता। अुसमें हिंसा भले न हो, लेकिन वह मांसाहार तो है ही।

किसी समय बापू कलकत्ता गये थे। वहाँ भूपेन्द्रनाथ वसुके घर मेहमान रहे। बंगालियोंकी खातिरदारी मशहूर तो है ही। जितने सूखे और ताजे मेवे अिकट्ठे हो सकते थे, अिकट्ठे किये गये और अुनसे जितनी भी चीजें बन सकती थीं सब बनवा दीं, और बापूके सामने रख दीं। देखकर बापू हैरान थे। कहने लगे — 'यह क्या, मैं सादगी-पसन्द आदमी हूँ। कितनी झंझट की मेरे लिअे!' बापूने तुरन्त व्रत ले लिया — 'मैं अब हर दिन कुदरती पाँच चीजोंके अलावा अेक भी चीज नहीं खाअूँगा।'

अिसके बाद हम लोगोंमें शास्त्रार्थ छिड़ा। नीबू, संतरा और मोसम्बी अेक ही चीज़ मानी जाय या अलग अलग? गुड़, मिश्री और शक्कर अेक ही चीज़ गिनी जाय या नहीं? कअी सवाल सामने आये। बापू अैसे सवालोंकी चर्चा करनेमें किसी स्मृतिकार-जैसी दिलचस्पी लेते हैं और बालकी खाल निकालने तक चर्चा बढ़ानेसे भी नहीं अूबते।

अब तो सुबह अुन्होंने क्या क्या खाया है, अिसका स्मरण रखकर शामकी तैयारी करनी पड़ती थी। वे अक्सर सुबह तीन ही चीज़ें खाकर, वे ही चीज़ें शामको न मिलें और दूसरी खानी पड़ें, अिसलिअे दो नयी चीज़ोंकी गुंजायश रखते थे। सूर्यास्तके पहले शामका भोजन कर लेनेका अुनका नियम था ही। शामकी सभाओंका समय सँभालना और साथ साथ अुनके भोजनका समय सँभालना अुनके साथ रहनेवालोंके लिअे योगसिद्धि-सा कठिन हो जाता था।

कुछ दिन बाद बापूने अनुभव किया कि हिन्दुस्तान कोअी दक्षिण अफ्रीका नहीं है। यहाँ फल आसानीसे नहीं मिलते। दक्षिण अफ्रीकामें केले,

अनानास, सेव, संतरे आदि सब कुछ आसानीसे मिल जाते थे और पेटभर खाते थे। चिलगोजाकी भी भरमार थी। वैसे खानेमें वे कमजोर तो थे ही नहीं। अिसलिअे जब देखा कि हिन्दुस्तानमें फलाहार नहीं चल सकता, तो जहाँ गये वहीं मूँगफली सेंककर साथ ले जाने लगे। नारियल मिलता तो अुसका भी दूध या रस ले लेते। लेकिन आखिर बहुत सोचने पर यही तय किया कि हिन्दुस्तानमें अनाजके बिना काम नहीं चल सकता। तबसे चावल, रोटी या खिचड़ी लेने लगे। फिर यह अनुभव हुआ कि जब अनाज लेने लगे, तो नमक भी लेना ही पड़ेगा। वह भी शुरू हो गया।

खेड़ा जिलेमें रंगरूट भरती करानेका काम किया, तब अुन्हें खूब पैदल घूमना पड़ा। आहारमें बहुत हेरफेर हुआ। वह माफिक नहीं आया। फिर बीमार पड़े। अेक रातको तो पेटमें अैसा जबरदस्त दर्द रहा कि अुन्होंने मान लिया कि अब यह शरीर नहीं रहेगा। अुसी दिन बापूका छोटा लड़का देवदास मद्राससे साबरमती आ रहा था। सारी रात बापूने:

'विहाय कामान् यः सर्वान् पुमांश्चरति निस्पृहः।
निर्ममो निरहंकारः स शांतिमधिगच्छति॥'

रटते रटते पूरी की। दूसरे दिन सुबह अुठकर रातका अनुभव कहने लगे। बोले — 'अुस हालतमें अेक कामना मनमें रह जाती। देवदास मद्राससे आ ही रहा है, अुसके पहुँचनेके पहले अगर शरीर छूट जाय तो अुसे कितना दुःख होगा। अुसके आने तक यदि शरीर रह जाय, तो अुसे अुतना आघात न लगेगा।'

गीताके श्लोकने अुन्हें शान्ति दी और रात टल गयी।

सुबह हम शिक्षकोंको बुलाया। मेरे साथियोंने सोचा कि हमसे अलग अलग बातें करना चाहते हैं। सबने मुझे पहले भेजा। मैं जाकर चुपचाप बैठ गया। बापूने कहा — 'सबको बुलाओ।' सबके अिकट्ठा होने पर अगली रातका अनुभव सुनाया और कहने लगे — 'मुझे विश्वास नहीं कि मेरा शरीर टिकेगा। मेरी ओरसे हिन्दुस्तानको मेरा आखिरी संदेश

कह दो कि **हिन्दुस्तानका अुद्धार अहिंसासे ही होगा और हिन्दुस्तान अहिंसाके द्वारा जगतका अुद्धार कर सकेगा।** बस अितना कहकर चुप हो गये। हमारी अपेक्षा थी कि आश्रमके बारेमें कुछ कहेंगे, हममेंसे हर अेकको कुछ न कुछ कहेंगे। लेकिन कुछ भी नहीं कहा। फिर अुसी गीताके श्लोकमें मग्न हो गये। बड़ी देर तक हम लोग बैठे रहे। फिर अुठकर चले गये।

अुनकी बीमारी बढ़ती ही गयी। हम सब लोग चिंतित हो गये। अितनेमें सरकारने रौलेट अेक्टका मसविदा प्रकाशित किया और गांधीजीके अन्दर जिजीविषाने प्रवेश किया। कहने लगे — 'मैं अिस वक्त तगड़ा होता, तो सारे देशमें घूमकर अुसे जाग्रत करता। युद्धमें हमने सरकारको मदद दी, अुसके बदलेमें हमें रौलेट अेक्ट मिल रहा है!'

बम्बअी और महाराष्ट्रसे चन्द राष्ट्रसेवक बापूको मिलने आये। रौलेट अेक्टका विरोध करनेके लिअे, अंतिम हद तक जानेके लिअे कौन-कौन तैयार है अिसकी अेक फेहरिस्त बापूने तैयार करवाअी। अुनका खयाल था कि अैसे लोगोंको वे बिस्तर पर पड़े पड़े सलाह सूचना देते रहेंगे। लेकिन कार्यके महत्वने दवाका काम किया। वे खूब चंगे हो अुठे और अुन्होंने स्वयं ही आन्दोलन शुरू किया।

२२

हम साबरमती आश्रममें थे। बापू मगनलालभाअीके घरमें रहते थे। अिसका अर्थ यह हुआ कि मगनलालभाअीके देहान्तके बादकी यह घटना है। बापूको जिस तरह देशके सार्वजनिक कार्योंकी समस्यायें हल करनी पड़ती हैं, अुसी तरह अुनके मित्रोंकी कौटुंबिक समस्यायें भी अनेक बार हल करनी पड़ती हैं। शायद अैसे नाजुक कार्योंमें अुनको अधिक सफलता मिलती है और अैसे कार्योंके द्वारा की हुअी राष्ट्रसेवा सार्वजनिक सेवासे बढ़ी चढ़ी है।

बापूके परिचयके अेक परिवारके युवकका ब्याह तय हुआ था। और जब कन्या पक्षके लोग सम्बन्ध तय करके अेक चिन्तासे मुक्त हुअे

ही थे कि अितनेमें लड़का बिगड़ बैठा । कहने लगा — ‘ मुझे यह शादी नहीं करनी है ।’ अुसे बहुत समझाया गया, पर वह नहीं माना । अन्तमें कन्या पक्षके लोग हताश होकर बापूके पास आये । अुनको संकोच था ही कि बापू जैसे विश्ववंद्य पुरुषका समय असे काममें हम कैसे लें । लेकिन लाचार आदमी क्या नहीं करता ! बापूने अुस लड़केको बुलवाया और अुससे बहुत बातें कीं । कन्या पक्षके लोग बैठकर सब सुनते ही थे । दो तीन दिन तक लगातार बापूने अुस लड़केके साथ सिरपच्ची की । लड़का कितना वाहियात था, यह सब देख रहे थे ।

तीसरे दिन किसी कार्यवश मैं बापूके पास गया । लड़का जोर जोरसे अपनी कठिनाअी बताते हुअे अपने दिलकी फरियाद कर रहा था । कहता था — ‘ मेरे पिता तो मुझसे पाँच घण्टेका काम माँगते हैं । कहते हैं कि दुकान पर पाँच घण्टे तक बैठना होगा । अब बापू, आप ही बताअिये आजकलके लड़के दो घण्टेसे ज्यादा काम दे सकते हैं ? मेरी परेशानी आपको क्या कहूँ — ’ अित्यादि ।

बापूने सब कुछ शान्तिसे सुना और अन्तमें लड़केके मुँहसे विवाहकी स्वीकृति निकाल ली । शादी करनेके लिअे वह राजी हुआ । कन्या पक्षके लोग चिन्ता मुक्त हुअे ।

अितनेमें बापू गंभीर हो गये । फिर अुस लड़केको जरा बाहर बैठनेको कहा और कन्यावालोंसे अपील की कि ‘अिस लड़केकी हालत तो आपने तीन दिन तक देखी ही है । कैसी परिस्थितिमें अुससे स्वीकृति लेनी पड़ी, यह भी आपने देख लिया । अब मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या अब भी आप अिस विवाहको चाहते हैं ?

कन्या पक्षका जो प्रधान पुरुष था, अुसके चेहरेकी ओर मैं देखता रहा । अुसके मनमें न जाने सारी दुनिया घूम रही थी । अुसके मुँहसे न हाँ निकले न ना । और बापू तो अपनी विलक्षण भेदक दृष्टिसे अुसकी तरफ देखते ही रहे । खूब सोचकर अुस आदमीने कहा — अुसका गला गद्‌गद हो गया था — ‘ महात्माजी आपकी बात सही है । हमारा आग्रह अब नहीं रहा ।’ अुसी क्षण बापूजीने अुस लड़केको बुलाया और तुरन्त कहा — ‘ तुम पर मैं बोझ नहीं डालना चाहता । अुनसे मैंने

बातचीत की है। तुम अिस विवाह सम्बन्धसे मुक्त हो। अब तुम जाओ।'

लड़का चला गया। कन्या पक्षके लोग भी वहाँसे अुठे। बापूजी मेरी ओर मुड़े। मेरी बात सुननेके पहले कहने लगे—'काका, आज गोरक्षाका काम किया। जब मैं गोरक्षाकी बात करता हूँ, तब केवल चतुष्पद जानवरोंका ही खयाल मेरे मनमें नहीं रहता। न जाने हम अुस बेचारी बालिकाका क्या करने बैठे थे! यह मंगलकार्य हो गया।'

अितना कहकर मेरे कामकी ओर बापूजीने ध्यान दिया। फिर भी अुनके चेहरे पर मुक्तिका निःश्वास दीर्घ काल तक बना रहा।

२३

बिहार और अुड़ीसाके लोगोंके प्रति बापूके मनमें विशेष करुणा है। अुड़ीसाकी जनता बिलकुल असहाय, पिसी हुअी है। बिहारके निलहे-गोरोंने वहाँकी जनताको कम नहीं पीसा था। बिहारकी जनता भोली और निष्ठावान् है। वहाँ परदेकी प्रथा है। अुसे दूर करनेके लिअे वहाँके लोगोंने बापूसे अेक प्रचारिका माँगी। आश्रमवासियोंकी शक्तिके अूपर बापूका विशेष विश्वास रहता है। अुन्होंने अपने भतीजे, आश्रम व्यवस्थापक श्री मगनलालभाअीकी लड़की राधाको बिहार भेज दिया। चि० राधा भी आत्मविश्वासके साथ वहाँ गयी। अुसने वहाँ अच्छा काम किया। अेक समय अपनी लड़कीको मिलनेके लिअे मगनलालभाअी वहाँ गये। वहीं पर बीमार होकर अुनका देहान्त हो गया। आश्रमके लिअे तो वह वज्रपातके जैसा था। तार आते ही सबके होश अुड़ गये। वह सोमवारका दिन था। बापूका मौन था। तार सुनते ही बापू अपने स्थानसे अुठकर मगनलालभाअीके घरमे पहुँच गये। अितनेमें मैं भी पहुँचा। मुझसे रहा न गया। मैं रो पड़ा। तब बापूने अपना मौन तोड़कर मेरा सांत्वन किया। मगनलालभाअीके लड़के लड़कियोंको बुलाकर अपने पास बैठाया। जब मैं वहाँसे जानेके लिअे तैयार हुआ, तो बापूने कहा—'जब मैंने सोमवारके मौनका व्रत लिया, तभी अुसमें दो अपवाद रखे थे। अगर मेरे शरीरको कोअी असह्य

पीड़ा होती हो, या दूसरेका अैसा ही दुःख हो, तो आवश्यक बातें करनेके लिअे मौन टूट सकता है। अितने बरसों बाद आज ही अुस अपवादका सहारा लेना पड़ा।'

बापू मगनलालभाअीके घरमें अुनकी पत्नी और बच्चोंको सान्त्वना देनेके लिअे गये थे, लेकिन वहीं रह गये, अपने स्थानपर लौटे ही नहीं। आवश्यक चीज़ें वहीं पर मँगवा लीं। मगनलालभाअीके परिवारको अनुभव होने ही नहीं दिया कि अब वे अनाथ हो गये हैं।

२४

आश्रमके प्रारंभके दिनोंकी बात है। अहमदाबादमें मिल मजदूरोंने अपनी मजदूरी बढ़ानेके लिअे आन्दोलन शुरू किया। मिल मालिकोंके मुखिया थे श्री अंबालाल साराभाअी। और मिल मजदूरोंके पक्षमें थीं अुन्हें संगठित करनेवाली श्री अंबालाल साराभाअीकी बहन अनसूयाबहन। दोनोंके मनमें गांधीजीके प्रति श्रद्धा थी। दोनोंके प्रति गांधीजीके मनमें सद्भाव था। समझौता नहीं हुआ और सत्याग्रहकी नौबत आयी। गांधीजीने मिल मजदूरोंसे प्रतिज्ञा करवाअी कि जब तक ३५ फी सदी वृद्धि न हो, तब तक कामपर वापस नहीं जायँगे। सत्याग्रहकी अवधिमें मजदूरोंके खानेपीनेका क्या प्रबंध? अनसूयाबहन अिसकी चिन्तामें पड़ीं। करीब दस हजार रुपये तो वे खर्च कर ही चुकी होंगी। जब बापूने सुना तो कहने लगे — 'यह गलत रास्ता है। मिल मालिकोंके सामने तुम्हारी पूँजी कहाँ तक काम आयेगी! अगर अुन्हें पता चल गया कि तुम्हारे पैसेके बल ये लोग लड़ रहे हैं, तो वे हरगिज़ समझौता नहीं करेंगे। और मजदूर तो तुम्हारे पंगु आश्रित बनेंगे। सत्याग्रह कोअी खेल नहीं है। वह अग्नि-परीक्षा है। अिन लोगोंको अपने ही बलपर लड़ना चाहिये।'

अब गरीब लोग कहाँ तक फाका करके सत्याग्रह कर सकते थे! सत्याग्रह थी भी अेक नयी चीज। अुनके लिअे ही नहीं, सारे देशके लिअे। कुछ ही दिनोंमें मजदूरोंमें कमजोरी दिखाअी देने लगी। वे हारकर काम पर जाने के लिअे तैयार हो गये। बापूसे यह सहा न गया। 'हम

भूखे मरेंगे, किन्तु प्रतिज्ञा नहीं तोड़ेंगे', अैसी वृत्ति मजदूरोंमें अगर पैदा करनी है, तो स्वयं ही अुन्हें भूखका पाठ भी सिखाना पड़ेगा।

मजदूरोंकी सभा बुलाअी गयी। अुसमें लोगोंको समझाते हुअे बापूने कहा — 'जब तक आप लोगोंको ३५ फी सदी वृद्धि न मिले, आपको अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहना चाहिये। आप लोग हार जायँ, यह मुझे सहन नहीं होगा। मुझे साक्षी रख कर आपने प्रतिज्ञा ली है। अिसलिअे अब मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि जब तक आपकी शर्त पूरी नहीं होगी, मैं भूखा ही रहूँगा।' अिसका असर बिजली-जैसा हुआ। मजदूरोंमें दैवी शक्ति आ गयी। रोज शामको बापू आश्रमसे चार-छह मील चलकर मजदूरोंके मुहल्लोंमें जाते और वहाँ प्रतिज्ञा पालन और अहिंसा पालनका महत्व समझाते। अुनके बीच पढ़नेके लिअे रोज अेक नयी पत्रिका भी छपवाते।

बापूके अुपवासकी बात सुनते ही महादेवभाअीने और मैंने बापूके साथ अुपवास करनेका सोचा। बापू नहीं खाते तो हमसे कैसे खाया जा सकता है। महादेवभाअीने बापूसे अपना अिरादा जाहिर किया। अुन्होंने मना किया। महादेवभाअीने माना नहीं। चर्चा और दलीलके लिअे समय नहीं था। बापू सख्तीसे बोले — 'देखो महादेव, मैं जानता हूँ कि तुम्हारा धर्म क्या है। जाओ, खाना खाओ। नहीं खाओगे, तो मैं तुम्हारा मुँह नहीं देखूँगा।'

बेचारे महादेव अपना-सा मुँह लेकर मेरे पास आये। कहने लगे — 'बापू मेरा मुँह न देखें, तो मैं जीअूँ कैसे?' मैंने कहा — 'बापू ही तो हमारी conscience हैं। जब वे कहते हैं कि खाना खाना चाहिये, तो हमें खाना चाहिये। खाना खाकर ही हमें अपनी परीक्षा देनी है।'

मेरा नाम भी बापू तक चला गया था। मैं अुनके पास गया और सफाअी देने लगा — 'मैंने महादेवसे सब कुछ सुन लिया है। हम दोनोंने खानेका तय किया है। मैं सिर्फ खजूर और पानी पर रहूँगा। लेकिन अिसका अुपवासके साथ कोअी सम्बन्ध नहीं है। यह मेरा स्वतंत्र प्रयोग है।' अुन्होंने तुरन्त कह दिया — 'हाँ, ठीक है, अपना प्रयोग तुम कर सकते हो।'

सचमुच ही मैं अैसा प्रयोग करनेका सोच ही रहा था। मुझे डर था कि बापू शायद शंका करेंगे कि मैंने चालाकीसे नया रास्ता निकाला है। लेकिन बापूके मनमें शंका कभी आती ही नहीं। बिना किसी शक-शुबहाके अुनसे अिजाजत पाकर मुझे बड़ा संतोष हुआ।

हमारा झगड़ा तो अिस तरह निपटा। अुधर अनसूयाबहनने भी सोचा कि मैंने ही बापूको अिस मजदूरोंके झगड़ेमें खींचा है। अिसलिअे जब वे अुपवास कर रहे हैं, तो मुझे भी अुपवास करना चाहिये। अनसूया बहनकी यह बात मजदूरोंके कानों तक पहुँच गयी। वे बड़े ही बेचैन हुअे। अनसूयाबहन आश्रममें आयी थीं। वहाँ अेक मुसलमान मजदूर आया और कहने लगा — 'महात्माजी तो महात्माजी हैं। वे अुपवास करें तो हम बरदाश्त कर सकते हैं। लेकिन अगर आप अुपवास करेंगी, तो हमसे सहन नहीं होगा। मेरा सिर ठिकाने नहीं रहेगा, शायद किसी मिल मालिकका खून भी कर बैठूँ।' यह तो अिदं तृतीयम् (नयी बात) हुआ। बापूने अनसूया बहनको भी अुस वक्त समझाया कि अुपवास करनेका तुम्हारा धर्म नहीं है। फिर, प्रार्थनाके समय कहने लगे — 'अगर मेरे साथ तुम लोग अुपवास करोगे, तो अुससे मेरी शक्ति बढ़नेवाली नहीं है। अुलटी तुम लोगोंकी चिंता मुझे रहेगी। अिसलिअे तुम्हारा धर्म यह है कि अच्छी तरह खा-पीकर मेरे साथ काम करते रहो। अगर अिस अुपवासमें मेरा देह छूट जाय, तो अुस दिन भी तुम्हें अफसोस नहीं करना चाहिये। अगर आश्रम जीवनमें मिष्टान्न भोजनकी गुंजायश हो, तो अुस दिन तुम्हें मिष्टान्न बनाकर खाना चाहिये। मगर मेरे साथी मेरे साथ फाका करने लगें, तो मेरा सब काम ही रुक जायेगा और मैं कभी अुपवास कर ही नहीं सकूँगा।' यह सत्याग्रह कब तक चला और अुसका अंत कैसा हुआ और बापूके शब्दोंमें 'दोनों पक्षोंकी जीत' कैसे हुअी, सो यहाँ बतानेकी आवश्यकता नहीं। महादेवभाअीने 'अेक धर्म युद्ध'* में अिसका स्पष्ट विवरण दिया है।

---

* हिन्दी अनुवादक: श्री काशिनाथ त्रिवेदी; प्रकाशक — नवजीवन कार्यालय, अहमदाबाद।

२५

सन् १९२६ की बात होगी। बापूजी दक्षिणकी तरफ खादीके लिअे दौरा कर रहे थे। तमिलनाडका दौरा तो पूरा हो चुका था। आंध्रमें मोटरसे मुसाफिरी चल रही थी। हम चिकाकोल पहुँचे। रातके दस बजे होंगे। वहाँ पहुँचे तो देखा कि अच्छी अच्छी कातनेवालियोंके कताअी-दंगलका कार्यक्रम रखा गया है। चिकाकोलकी महीन खादी सारे हिन्दुस्तानमें मशहूर है। हम दिन रातके मोटरके सफरसे थके हुअे थे। हमने सोचा, बापूके लिअे तो चारा ही नहीं। अुन्हें दंगलमें बैठना ही पड़ेगा। हम नाहक क्यों परेशान हों। सीधे जाकर सोना ही अच्छा है। महादेवभाअी और मैं अपने अपने स्थानपर जाकर सो गये। बापूका बिस्तर लगा हुवा था। वे कब आकर सोये हमें मालूम नहीं।

सुबह ४ बजे हम प्रार्थनाके लिअे अुठे। हाथ मुँह धोकर प्रार्थना शुरू करते हैं, अुसके पहले बापूने पूछा — 'रातको सोनेके पहले क्या तुम लोगोंने प्रार्थना की थी?' मैंने कहा — 'जब आया तो अितना थक गया था कि आते ही सो गया। प्रार्थनाका स्मरण ही न रहा। जब अभी आपने पूछा तो खयाल हुआ कि रातकी प्रार्थना रह गयी।'

महादेवभाअीने कहा — 'मैं भी सोया तो अैसे ही था। लेकिन आँख लगनेके पहले स्मरण हो आया। अिसलिअे बिस्तर पर बैठकर ही प्रार्थना कर ली। काकाको नहीं जगाया।'

फिर बापूने अपनी बात सुनाअी। कहने लगे — 'मैं तो घंटा डेढ़ घंटा दंगलमें बैठा। वहाँसे आकर अितना थक गया था कि मैं भी प्रार्थना करना भूल गया और यों ही सो गया। फिर जब दो ढाअी बजे नींद खुली, तो स्मरण हुआ कि रातकी प्रार्थना नहीं हुअी। मुझे अैसा आघात लगा कि सारा शरीर काँपने लगा। मैं पसीनेसे तर बतर हो गया। अुठकर बैठा, खूब पश्चाताप किया। जिसकी कृपासे मैं जीता हूँ, अपने जीवनकी साधना करता हूँ, अुस भगवानको ही भूल गया! कितनी बड़ी गलती हो गयी यह! मैंने भगवानसे क्षमा माँगी। लेकिन तबसे नींद आयी ही नहीं, अैसा ही बैठा हूँ।'

अिसके बाद हमने सुबहकी प्रार्थना की। महादेवभाअीने भजन गाया। फिर बापू बोले — 'मुसाफिरीमें भी हमें शामकी प्रार्थना मुकर्रर समय पर ही करनी चाहिये। हम सारे दिनका कार्यक्रम पूरा करके सोनेके पहले जब मौका मिले प्रार्थना करते हैं। यही गलती है। आजसे शामके ७बजे प्रार्थना होगी, फिर हम कहीं भी हों।'

हमारी मोटरकी मुसाफिरी चालू तो थी ही। शामके ७बजे हम कहीं भी हों, जंगलमें या किसी बस्तीमें, मोटर रोककर हम प्रार्थना कर लेने लगे।

२६

अभी अभी लोकमान्यका अेक छोटासा जीवन-चरित्र राष्ट्रीय-शिक्षणके आचार्य श्री आपटे गुरुजीने प्रकाशित किया है। अुसकी प्रस्तावनामें बम्बअीके स्पीकर माननीय श्री मावळंकरने नीचेकी बात लिखी है:

१९१५में अहमदाबादमें कांग्रेसकी प्रान्तीय परिषद् थी। अुन दिनों यह परिषद् नरम दलके हाथमें थी, हालाँकि परिषद्की कार्रवाअी चलानेका काम नवयुवक ही करते थे। मि० जिन्ना अध्यक्ष थे। अुनका जुलूस निकलनेवाला था। स्वागत समितिने लोकमान्य तिलकको भी निमंत्रण भेजा था। अुन्होंने आना स्वीकार किया था। युवक वर्ग चाहता था कि लोकमान्यका भी अेक जुलूस निकले। लेकिन परिषद्के सर्वेसर्वा अिसके लिअे तैयार नहीं थे। लोकमान्य गरम दलके जो ठहरे। अुन्होंने दलील की कि फिर तो सब नेताओंका जुलूस निकालना होगा। गरज यह कि परिषद्की ओरसे लोकमान्यका स्वागत नहीं हो सका। नवयुवक हतोत्साह हो गये।

अुन दिनों गांधीजीका राजनीतिक आन्दोलनमें कुछ स्थान नहीं था, न वे अभी महात्मा बने थे। यहाँ तक कि वे परिषद्के सदस्य भी नहीं थे। जब अुन्होंने सुना कि लोकमान्यका सार्वजनिक स्वागत नहीं हो रहा है, तो अुन्होंने अपने दस्तखतसे अेक पत्रिका छपवाकर हजारों प्रतियाँ अहमदाबादमें बँटवा दीं। अुसमें अितना ही था कि लोकमान्य

जैसे अलौकिक राष्ट्रपुरुष हमारे शहरमें पधार रहे हैं, अुनके स्वागतके लिअे मैं स्टेशन जा रहा हूँ। नगरवासियोंका धर्म है कि वे भी अुपस्थित रहें।

अिस पत्रिकाका जादू-सा असर हुआ। स्टेशन और रास्तोंपर लोगोंकी बेशुमार भीड़ हुअी और अपूर्व शानसे स्वागत हुआ।

२७

आश्रमके शुरूके दिन थे। हम बापूके पास देर तक बैठकर अिधर अुधरकी बातें भी कर सकते थे।

अेक दिन रातको देर तक हमारी बातें होती रहीं। अुसमें लोकमान्यका जिक्र आया। बापूने कहा — 'हिन्दुस्तानके स्वराज्यका दिनरात अखण्ड ध्यान करनेवाला वही अेक पुरुष है।' अितना कहकर वे अेक क्षण ठहरे, फिर कहने लगे — 'मैं निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि अिस क्षण अगर लोकमान्य सोते नहीं होंगे, तो या तो स्वराज्यकी ही कुछ न कुछ बात सोच रहे होंगे या फिर अुसीकी चर्चा कर रहे होंगे। अुनकी स्वराज्य-निष्ठा अद्‌भुत है।'

२८

३१ जुलाअी १९२०का दिन था। लोकमान्यका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ गया है, यह सुनकर मैं बम्बअी गया था। सरदारगृहमें जाकर मैंने लोकमान्यके दर्शन किये। दर्शनकी अिजाजत पाना आसान नहीं था। क्योंकि वे करीब करीब अुनके अन्तिम क्षण थे। अिजाजत पाकर मैं अंदर गया। साँस बहुत तेजीसे चल रही थी। बम्बअीके सब बड़े बड़े डॉक्टर अिर्दगिर्द खड़े थे। मुझसे अुस कमरेमें ज्यादा ठहरा न गया। हृदय भर आया। मैं वहाँसे लौटकर अुस कमरेमें गया, जहाँ महाराष्ट्रके सब नेता गमगीन होकर बैठे थे। मुझे कुछ अस्वस्थ देखकर श्री बापूजी अणेने अपने पास बुलाया और असहयोगकी नीतिके बारेमें कुछ चर्चा की।

शामकी ही गाड़ीसे मैं अहमदाबाद रवाना हो गया। मैंने बापूसे अितना ही कहा — 'दर्शन हो चुका, अब मैं आश्रम लौटता हूँ।'

अुसी रातको लोकमान्यका देहान्त हो गया। फोन पर समाचार सुनते ही बापूके मुँहसे पहला वाक्य यह निकला — 'अरे रे, मैंने काकाको रोक लिया होता तो अच्छा होता।'

अिसके बाद बहुत ही गंभीर विचारमें पड़ गये। सारी रात बिस्तर पर बैठे ही रहे। नज़दीक ही दिया जल रहा था, अुसे भी वैसा ही रहने दिया। दियेकी ओर ताकते हुअे सोचते ही रहे।

पिछली रातको महादेवभाअीकी आँख खुली। अुन्होंने देखा बापू तो वैसे ही बैठे हैं। वे अुनके पास गये। बापूके मुँहसे निकला — 'अब अगर मैं किसी अुलझनमें पडूँगा, तो श्रद्धापूर्वक किसके साथ परामर्श करूँगा। और जब कभी सारे महाराष्ट्रकी मददकी जरूरत आ पड़ेगी, तो किससे कहूँगा।' कुछ ठहरकर फिर बोले — 'आज तक मैं स्वराज्यका कार्य करता रहा, लेकिन स्वराज्यका नाम जहाँ तक हो सका टालता रहा हूँ। लेकिन अब तो लोकमान्यका चलाया हुआ स्वराज्यका अखंड जाप आगे चलाना होगा। अिस बहादुर वीरके हाथकी स्वराज्यकी ध्वजा अेक क्षणके लिअे भी नीचे न झुकने पाये।'

दूसरे दिन लोकमान्यकी स्मशान यात्रामें बापू शरीक हुअे। अुन्होंने अरथीको कंधा भी दिया। लेकिन अैसे गंभीर प्रसंगों पर जो शान्ति और गाम्भीर्यका वायुमण्डल रहना चाहिये, वह लोगोंमें न देखकर बापूके मनको आघात पहुँचा। बहुत ही दुखी हुअे। किन्तु बादमें अुसी चीजको अुन्होंने नयी दृष्टिसे देखा। जब अहमदाबाद आये, तो प्रार्थनामें अुसे दर्शाते हुअे कहा — 'जो जनता वहाँ अिकट्ठी हुअी थी, वह कुछ शोक करनेके लिअे थोड़े ही थी। वह तो अपने राष्ट्रनेताका सम्मान करने आयी थी। अुसके पाससे शोकके गाम्भीर्यकी अपेक्षा ही हम क्यों करें?'

२९

सन् २६ की बात है। बापू राजाजीके प्रबन्धके अनुसार दक्षिणमें खादी यात्रा कर रहे थे। यात्रा करते करते हम शिमोगाके पास पहुँचे। वहाँसे गिरसप्पाका प्रपात नजदीक था। राजाजीने वहाँ जानेके लिअे मोटर आदिका पूरा प्रबन्ध किया था। रास्ता करीब दस-बारह मीलका था। राजाजी, अुनके बालबच्चे, देवदास, गंगाधरराव देशपांडे, मैं, मणिबेन पटेल (वल्लभभाअीकी लड़की) अैसे बहुतसे लोग तैयार हो गये। मैंने बापूसे प्रार्थना की कि आप भी चलिये। अुनकी अरुचि देखी तो मैंने कहा — 'लार्ड कर्जन हिन्दुस्तानमें आया, तो मौका मिलते ही पहले वह गिरसप्पा देखने आया था। दुनियामें यह प्रपात सबसे अूँचा है।' बापूजीने पूछा — 'नायगेरासे भी?' अपने ज्ञानका प्रदर्शन करते हुअे मैंने कहा — 'नायगेरामें गिरनेवाले पानीका घनाकार (volume) सबसे अधिक है, लेकिन अूँचाअीमें तो अुससे बढ़नेवाले सैकड़ों प्रपात हमारे यहाँ हैं। गिरसप्पाका पानी ९६० फीटकी अूँचाअीसे अेकदम सीधा गिरता है। दुनियामें कहीं भी अितना अूँचा प्रपात नहीं है।'

मैं चाहता था कि बापू पर भी पानी चढ़ जाय। लेकिन अुन्होंने तो मेरे पर ही पानी डाल दिया। धीरेसे पूछने लगे — 'और आसमानसे बारिश गिरती है, वह कितनी अूँचाअीसे?' मैं मनमें झेंप गया। फिर भान हुआ कि — 'मैं अेक स्थितप्रज्ञसे बातें कर रहा हूँ।' मैंने अब अुन्हें फुसलानेकी कोशिश नहीं की, लेकिन दूसरा प्रस्ताव रखा — 'अच्छा, आप नहीं आते, तो न आअिये। महादेवभाअीको भेज दीजिये। आपके कहे बिना वे नहीं आयेंगे।' बापूने बिना झिझकके कहा — 'महादेव नहीं आयगा। मैं ही अुसका गिरसप्पा हूँ।' मुझे खयाल नहीं था कि वह अुनका 'यंग अिण्डिया' का दिन है। अपने अुस तूफानी दौरेमें भी 'यंग अिण्डिया' और 'नवजीवन' दो अखबार चलानेका भार वे दोनों लिये हुअे थे। अुस दिन वे अगर नहीं लिखते, तो अखबार

नहीं निकल पाते । मैं चिढ़ गया, बोला — 'न आप आते हैं, न महादेवको भेजते हैं, तो मैं भी किसलिअे जाअूँ? मुझे भी नहीं जाना।' बापूने बड़ी नरमीसे समझाया — 'गिरसप्पा देखने जाना तुम्हारा स्वधर्म है। तुम अध्यापक हो न? वहाँ हो आओगे तो अपने विद्यार्थियोंको भूगोलका अेक अच्छा पाठ पढ़ा सकोगे। तुम्हें तो जाना ही चाहिये।'

बचपनसे जिस गिरसप्पाकी बातें सुनता आ रहा था, और जिसे देखनेके संकल्प करते करते ही मैं छोटेका बड़ा हुआ था, अुसे देखने जानेके लिअे अिससे अधिक आग्रह मेरे लिअे आवश्यक नहीं था। मैं तरस तो रहा ही था, लेकिन बापूका आदेश पाकर अब जाना कर्तव्यरूप हो गया। मैं खुशी खुशी तैयार हो गया। गिरसप्पा * देखा और कृतार्थ हुआ।

मैंने बापू परकी चिढ़का सारा किस्सा गुजरातीमें कहीं लिखा है। बापूने भी अुसे पढ़ा तो होगा ही।

अिसके कोअी १५ बरस बाद किसी कारणसे बापूने महादेवभाअीको मैसूरके दीवान सर मिर्ज़ाके पास भेजा। कोअी भी नाजुक चर्चा (negotiations) होती, तो बापू महादेवभाअीको ही भेजते थे। महादेवभाअी जाने निकले। बापूने कहा — 'देखो मैसूर जा रहे हो। वहाँके कामके लिअे कुछ तो ठहरना ही पड़ेगा। अैसे यहाँ भी जल्दी लौटनेकी जरूरत नहीं है। अबकी बार गिरसप्पा जरूर देख आओ। मैंने सर मिर्ज़ाको भी लिखा है। वे तुम्हारा सब प्रबन्ध कर देंगे।'

महादेवभाअी गिरसप्पा देख आये। मैं समझता हूँ अुनसे भी ज्यादा समाधान मुझे हुआ। और बापूको शायद यह समाधान होगा कि मैं अेक कामसे दोनोंको संतुष्ट कर रहा हूँ।

---

* जहाँ प्रपात गिरता है, वहाँ नीचे अेक गाँव है। अुसका नाम है गिरसप्पा। अुसपरसे अंग्रेजोंने अुसका नाम रखा गिरसप्पा फॉल्स। अुसका असली नाम है 'जोग'। पुरानी कन्नड भाषामें प्रपातको ही जोग कहते हैं। शरावती नदीका यह जोग है। शरावतीको भारंगी भी कहते हैं।

अिसी दौरेकी बात है। हम सुदूर दक्षिणमें नागरकोविल पहुँचे थे। वहाँसे कन्याकुमारी दूर नहीं है। अिसके पहले किसी समय बापू कन्याकुमारी हो आये थे। वहाँके दृश्यसे प्रभावित भी हुअे थे। आश्रममें लौटकर कन्याकुमारीके बारेमें अुत्साहके साथ बात भी की थी।

हम नागरकोविल पहुँचे तो बापूने तुरन्त ही गृहस्वामीको बुलाकर कहा — 'काकाको मैं कन्याकुमारी भेजना चाहता हूँ। अुसके लिअे मोटरका प्रबन्ध कीजिये।' अुन्होंने स्वीकार किया।

कुछ समय बाद मेरे जानेका कोअी लक्षण न देखकर अुन्होंने गृहपतिको फिरसे बुलाया और पूछा कि मेरे जानेका प्रबन्ध हुआ या नहीं। किसीको काम सौंपनेके बाद अुसके बारेमें फिरसे दर्याफ्त करते बापूको मैंने कभी नहीं देखा था। मैं समझ गया कि बापू अुस स्थानको देखकर कितने प्रभावित हुअे हैं। मैंने कहीं पढ़ा भी था कि स्वामी विवेकानन्द भी वहाँ जाकर भावावेशमें आ गये थे और दरियामें कूदकर कुछ दूर अेक बड़ा पत्थर है वहाँ तक तैरते गये थे। मैंने बापूसे पूछा — 'आप भी आयेंगे न?' बापूने कहा — 'बार बार जाना मेरे नसीबमें नहीं है। अेक दफा हो आया अितना काफी है।' मुझे कुछ नाराज हुआ देखकर गंभीरतासे अुन्होंने कहा — 'देखो अितना बड़ा आन्दोलन लिये बैठा हूँ। हजारों स्वयंसेवक देशके कार्यमें लगे हुअे हैं। अगर मैं रमणीय दृश्य देखनेका लोभ संवरण न कर सकूँ, तो सबके सब स्वयंसेवक मेरा ही अनुकरण करने लगेंगे। अब हिसाब करो कि कितने जनोंकी सेवासे देश वंचित होगा। मेरे लिअे संयम करना ही अच्छा है।'

गिरसप्पाका अनुभव तो मुझे था ही, और बापूकी बात भी जँच गअी। मैंने कहा — 'ठीक है। मैं बाको साथ ले जाअूँगा। चन्द्रशंकर (मेरा सेक्रेटरी) तो आयेगा ही।'

हम गये। रास्तेमें शचीन्द्रका सुन्दर मंदिर था। कन्याकुमारीके अन्तरीपके स्थान पर कुमारी पार्वतीका मंदिर है। अुसके अँदर हम नहीं

गये, क्योंकि हरिजनोंको वहाँ प्रवेश नहीं था। लेकिन मेरे मनमें तो यह सारा विशाल और भव्य अंतरीप ही भारत माताका बड़ा मंदिर था। पूर्व सागर, पश्चिम सागर और दक्षिण सागर, तीन महासागरोंका यहाँ मिलन था। यहाँ सूर्य अेक सागरसे अुगता है और दूसरे सागरमें डूबता है। भारतके पूर्व और पश्चिम दोनों किनारे यहाँ अेक हो जाते हैं। यात्राकी यहाँ परिसमाप्ति होती है। समुद्रमें नहाकर मैं अेक बड़ी चट्टान पर जा बैठा और अुपनिषद्‌के जो मंत्र याद आये महासागरके तालके साथ गाने लगा। अिस प्राकृतिक और सांस्कृतिक भव्यताकी कसौटी पर मैंने बापूका जीवनक्रम कसकर देखा, तो सिद्ध हुआ कि अुस जीवनकी भव्यता अिससे कम नहीं है।

३१

बापूके दूसरे लड़के मणिलालका विवाह कुछ देरीसे हुआ। वे दक्षिण अफ्रीकामें रहते थे। हिन्दुस्तानमें विवाह करना था। कन्या पसन्द करनेका काम मणिलालने पिता पर ही छोड़ दिया था। बापूके छोटे मोटे सब कामोंमें श्री जमनालालजीको बड़ी दिलचस्पी रहती थी। अुन्होंने मशरूवाला कुटुम्बमेंसे अेक लड़की पसन्द की। वह थी अकोलाके नानाभाअी मशरूवालाकी लड़की सुशीला। जमनालालजीकी सूचना बापूने तुरंत स्वीकार कर ली। विधिके अनुसार विवाह हो गया और गाँधी कुटुम्बके सब लोग अकोलासे रवाना हुअे।

स्टेशन पर आते ही हँसते हुअे बापूने कहा — 'मणिलाल तुम्हें हमारे डब्बेमें नहीं बैठना चाहिये। तुम अपनी जगह ढूँढ़ लो। सुशीला भी वहीं बैठेगी। अेक दूसरेसे परिचय करनेका यही तो मौका है।'

बापूजी आश्रममें आये, तब प्रार्थनाके समय बापूने स्वयं अिस विवाहका सारा वृत्तान्त सुनाया।

३२

यह बात महादेवभाअीके मुँहसे सुनी हुअी है। अुत्तर हिन्दुस्तानमें महादेवभाअी बापूके साथ मुसाफिरी कर रहे थे। चलती ट्रेनमें लिखनेका अभ्यास बापूको भी है और महादेवभाअीका तो पूछना ही क्या। अेक दिन महादेवभाअी शामसे जो लिखने बैठे तो पिछली रात तक लिखते ही रहे। काम खतम करके ही सोये। अब सुबह जल्दी अुठना असम्भव था।

जब जागे तो देखा कि बापूने स्वयं स्टेशनके वेटिंग रूममें जाकर अपने महादेवके लिअे चाय, दूध, शक्कर, पावरोटी, मक्खन सब मँगवाकर ट्रेमें तैयार रखा है। वे स्वयं तो चाय पीते नहीं थे, लेकिन अुन्हें मालूम था कि महादेवको चायके बिना नहीं चलता। अिसलिअे यह सब तैयारी करके महादेवके जागनेकी राह देखने लगे। महादेवभाअी जागे तो यह सब तैयारी देखकर बड़े झेंपे। विशेष तो अिसलिअे कि अुनकी चायकी पोल बापूके सामने खुल गयी। किन्तु बापूने अिधर अुधरकी मीठी मीठी बातें करके अुनका सारा संकोच दूर कर दिया। मतलब था कि रातकी थकान भी तो दूर होनी चाहिये।

३३

सरकार जब बापूको चम्पारनसे नहीं हटा सकी, तो अुसने अेक दूसरी चाल चली। लेफ्टिनेंट, गवर्नर आदि बड़े बड़े अफसरोंने बापूको बुलाकर कहा — 'आप तो बड़े अच्छे आदमी हैं, लेकिन जो लोग आपको सहयोग दे रहे हैं वे कुटिल हैं। अुन्हें हम जानते हैं।'

ये अफसर नहीं जानते थे कि बापूके साथ पेश आनेका यह सबसे बुरा तरीका है। बापूने तुरन्त कहा — 'आप तो अुन्हें दूरसे जानते हैं। मैं अुनके साथ दिन रात रहता हूँ। निजी अनुभव पर कहता हूँ कि ये लोग मुझसे कहीं ज्यादा अच्छे हैं। बुरा तो मैंने किसीको नहीं पाया।'

शायद पुलिस कमिश्नर वहीं था। वह बोला — 'आपके साथ जो प्रोफेसर कृपलानी हैं, अुनका रेकार्ड तो बड़ा खराब है हमारे पास।

वह शख्स mischief monger (शरारती) है। Agitator (भड़कानेवाला) तो है ही।

बापूने हँस कर कहा — 'आप जानते हैं, प्रो० कृपलानी मेरे यहाँ क्या काम करते हैं? वे तो मिसेस गांधीके साथ सारे समय हम सबके लिअे रसोअी बनानेमें व्यस्त रहते हैं। वहाँ वे कौनसी शरारत कर सकते हैं भला?'

बेचारा पुलिस कमिश्नर तो बापूका मुँह ताकता रह गया। अुसकी समझमें नहीं आया कि बिहारके विद्यार्थियोंको बहकानेवाला यह बड़ा प्रोफेसर गांधीजीके यहाँ बाबाजी * बनकर कैसे रह रहा है!

बापूने कहा — 'किसी दिन आकर देखिये तो सही, बेचारेको सिर अूँचा करने तकका समय नहीं मिलता।'

अिसके बाद जब बापूकी वह प्रख्यात जाँच शुरू हो गयी और हजारों किसान अपना दुखड़ा रोनेके लिअे अुनके पास आने लगे, तब तो अुन्हें अनेक बार कलेक्टरको किसी न किसी कामसे खत लिखने पड़ते थे। और हर वक्त अपनी चिट्ठी कलेक्टरके बंगले पर बापू कृपलानीके हाथ ही भेजते थे। बेचारा गोरा हैरान रहता कि यह arch sedition monger गांधीके यहाँ चपरासीका भी काम करता है!

३४

किसी समय बापू महाराष्ट्रमें दौरा कर रहे थे। मीरजमें अुनका थोड़ासा कार्यक्रम था। वह तो पूरा हो गया। लेकिन लोगोंकी अिच्छा थी कि वे कुछ अधिक रहें। जब देखा कि बापू मानते नहीं हैं, तो अुन्होंने भारतमें प्रचलित असंस्कारी ढंगसे आग्रह करना चाहा। समय हो गया, तो भी मोटर आयी ही नहीं।

बापू बेचैन हो गये। लोगोंसे पूछा तो कहने लगे — 'मोटर बिगड़ गयी है।' बापूका धीरज टूट गया, बोले — 'मुझे तो अिसी क्षण

---

* बिहारमें रसोअियाको बाबाजी कहते हैं।

अगले मुकामके लिअे रवाना होना चाहिये । मैं यहाँ नहीं रह सकता ।' अितना कहते ही अुन्होंने तो पैदल ही रास्ता पकड़ा । कुछ स्वयंसेवक अुनके साथ हो लिये । बापूने अुनसे पूछा — 'अगले मुकामका रास्ता किधरसे जाता है ?'

अभी भी अुन लोगोंकी शरारत पूरी नहीं हुअी थी । अुन्होंने अेक गलत दिशा बतला दी ।

अुन दिनों बापू जूता नहीं पहनते थे । गोखलेजीके देहान्तके बाद बापूने जो अेक साल जूता न पहननेका व्रत ले रखा था, शायद वे ही दिन थे ।

बापूने जब देखा कि रास्ता तो आगे है नहीं, तो अुसी दिशामें खेतमेंसे जाने लगे । पैरोंमें काँटे चुभ गये पर रुके नहीं । तब तो स्वयंसेवक शरमाये । अुन्हें बड़ा दुःख हुआ । अुन्होंने क्षमा माँगी, सही रास्ता बताया और अेक दो आदमियोंको दौड़ाकर मोटरका प्रबन्ध कर लानेके लिअे तैयार हुअे ।

३५

१९२७की बात है । मैं बापूके साथ अुड़ीसामें बालासोर गया था । वहाँसे भद्रक जानेकी बात थी । भद्रकमें कुछ सभाका प्रबन्ध किया गया था । बापू नहीं जा सकते थे । अुन्होंने मुझसे कहा — 'तुम जाओ और सभाको मेरा संदेश सुनाओ ।' मैं तैयार हो गया । लेकिन मुझे ले जानेवाला कोअी आया ही नहीं ।

करीब अेक घंटा हो गया होगा । बापूने मुझे वहीं देखा । पूछने लगे — 'गये क्यों नहीं ?' मैंने कहा — 'मैं तो तैयार बैठा हूँ । कोअी मुझे ले जाय तब न ?' बापू बड़े नाराज हुअे । कहने लगे — 'अिस तरहसे काम नहीं होते हैं । समय होते ही तुम्हें चले जाना चाहिये था । मोटर न मिली तो क्या हुआ ? पैदल निकलते । दो दिन लगते, तो लग जाते । हमारा मतलब पहुँचनेसे नहीं है, समय पर निकलनेसे है ।'

मैं बड़ा ही शरमिन्दा हुआ और अुसी क्षण चल दिया। रास्ते पर जो भी लोग दीख पड़े, अुनसे पूछता था कि भद्रकका रास्ता कौनसा है? करीब अेक मील अिस तरह पैदल गया। वहाँ मेरे पीछे श्री हरेकृष्ण मेहताब आ गये। अुन्हें पता लगा कि मैं अिस तरहसे गया हूँ। अुनसे रहा न गया। अुन्होंने मोटरके प्रबन्धके लिअे किसीको आज्ञा दे दी और स्वयं पैदल निकले। हम दोनों करीब अेक मील और पैदल गये होंगे, अितनेमें पीछेसे अुनकी मोटर आ गयी।

जब हम भद्रक पहुँचे तो शाम होने आयी थी। जहाँ सभा होनेको थी, वहाँ सरकारी कर्मचारियोंके तम्बू लगे हुअे थे। वे टेक्स वसूल करनेवाले अमलदार थे। लोग अुनसे अैसे डरते थे कि वहाँ कोअी आता ही न था। बड़ी मुश्किलसे हम लोग चन्द लोगोंको बुलाकर अिकट्ठा कर सके। वे आसपासके देहातसे आये हुअे थे। मैंने अुनको निर्भयताकी बातें बतायीं। सरकारी अमलदार आखिर हैं तो हमारे नौकर। अुन्हें हमसे डरना चाहिये, हम अुनसे क्यों डरें? वगैरा वगैरा कअी बातें मैंने कहीं। लोगोंके अूपर क्या असर हुआ, यह तो भगवान जाने। लेकिन वे अमलदार तो मुझसे चिढ़ गये।

दूसरे दिन बापू भी भद्रक आ पहुँचे। फिर तो पूछना ही क्या था! लोग हजारोंकी संख्यामें अिकट्ठे हुअे और बाढ़में जिस तरह कूड़ा कचरा बह जाता है, अुसी तरह वे अमलदार न जाने कहाँ चले गये।

३६

१९२२ में बापू पहली बार जेलमें गये थे। अुन्हें यरवड़ा जेलमें रखा गया। हिन्दू और मुसलमान दोनोंकी गांधीजीके प्रति असाधारण भक्ति है, यह जानकर यरवड़ाके जेल सुपरिण्टेण्डेण्टने अुनका काम करनेके लिअे अफ्रीकाके अेक सिद्दी कैदीको नियुक्त किया। वह बेचारा कैदी हिन्दुस्तानकी कोअी भी भाषा ठीक नहीं जानता था। बहुतसा काम अिशारेसे और जो दस बीस शब्द वह जानता था अुनसे चलता था। अैसा आदमी गांधीजीकी भक्ति नहीं करेगा, अुनके प्रति पक्षपात नहीं

करेगा, यह गोरे अमलदारकी अपेक्षा थी। बेचारा अमलदार! वह नहीं जानता था कि मानव-हृदय सर्वत्र अेक-सा ही है।

अेक दिन अुस कैदीको बिच्छूने काटा। बेचारा रोता चिल्लाता बापूके पास आया। कहने लगा कि हाथमें बिच्छूने काटा है।

किसीका दुःख देखकर बापूका हृदय तुरन्त पिघल जाता है। अेक क्षणकी भी देरी किये बिना अुन्होंने अुस आदमीके हाथका वह भाग पानीसे अच्छी तरह धो लिया। पोंछकर सूखा किया और तुरन्त डंककी जगह चूसने लगे। अितने जोरोंसे चूसा कि जहर कम हो गया। बेचारेकी वेदना कम हो गयी। अुसके बाद बापूने और भी अिलाज किये और वह अच्छा हो गया।

अुस गरीबने जिन्दगी भरमें अितना प्रेम कभी नहीं पाया था। वह तो प्रेमके वश अुनका दास ही बन गया। अुनके अिशारों पर नाचने लगा। अुनके सब काम भक्तिसे करने लगा। अुसने देखा कि गांधीजीको सूत कातना प्रिय है। अुसने तकली अुठाअी और देख देखकर स्वयं भी सूत कातने लगा। फिर तो अुसने चरखा भी चलाना शुरू किया। आगे जाकर धुनकनेकी कला भी सीख गया और बापूके लिअे पूनी बनाकर देने लगा। सुपरिण्टेण्डेण्टके ध्यानमें आ गया कि यह तो अुलटी ही बात हो गयी। लेकिन करता क्या?

३७

जब १९३०में मैं बापूके साथ यरवडा जेलमें था तबकी बात है। अुनकी रसोअी बनानेके लिअे सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर मार्टिनने दत्तोबा नामक अेक महाराष्ट्री कैदीको नियुक्त किया था। दत्तोबाको काम तो बहुत नहीं था। बापूके कपड़े धोता था, बकरीका दूध गरम करके रखता था, और अैसे ही छोटे मोटे काम कर देता था। बेचारेके पाँवमें कुछ दर्द था। लँगड़ाता लँगड़ाता सब काम करता था।

अेक दिन बापूने मेजर मार्टिनसे बात की। अुसने कुछ दवा दी। लेकिन पाँवका दर्द नहीं गया। अिस तरह करीब अेक महीना बीत गया।

तब बापूने मेजर मार्टिनसे कहा — ‘अगर अिस आदमीकी मैं चिकित्सा करूँ, तो आपको कोअी अेतराज है ?’ मेजरने कहा — ‘बिलकुल नहीं।’ बापूने कहा — ‘मेरी चिकित्सामें आहार ही मुख्य चीज है। मेरी ओरसे मैं अुसे खास आहार दूँगा।’ अिस पर भी मार्टिनने कहा कि ठीक है।

बापूकी चिकित्सा शुरू हुअी। पहले तो अुन्होंने अुसको कुछ दिनके लिअे अुपवास करनेको कहा, अेनिमा वगैरासे अुसका पेट साफ करवाया और फिर अुसे कुछ दिन केवल शाक पर रखा। बादमें आहारमें समय समय पर परिवर्तन करते गये। लँगड़ेको अच्छा फायदा हुआ। अुसने मुझे कहा — ‘बरसोंसे अिस दर्दसे परेशान हूँ। अब तो मेरा पैर ठीक हो गया। चलनेमें थोड़ी भी तकलीफ नहीं होती। मुझे खुदको आश्चर्य होता है कि अब मैं सब जैसा कैसे चल सकता हूँ।’

बापूके छूटनेके बाद वह भी छूट गया। अुसने बम्बअीमें कुलबाकी ओर चाय-कॉफीकी अेक दुकान खोली। अेक दिन अुसने कहीं सुना होगा कि बापू बम्बअी आये हैं। वह दर्शनके लिअे आया और साष्टांग दण्डवत किया। अुसकी आँखोंसे कृतज्ञता बह रही थी। बापूने मुझे कहा — ‘अिससे कहो कि आज बहुत काममें हूँ, कल जरूर मिलने आवे।’ मैंने दत्तोबाको समझाया कि बापू अुससे मिलना चाहते हैं, कल जरूर आवे। अुसने कहा कि कल जरूर आअूँगा। लेकिन कमबख्त आया ही नहीं। बापूका खयाल था कि अुसे अुसकी दुकान चलानेके लिअे अगर सौ-पचास रुपये दिये जावें तो बेचारा खुश होगा। अुसने अगर अपना पूरा पता मुझे दिया होता, तो मैं अुसे ढूँढ़ कर ले आता। लेकिन बम्बअीके मानव-सागरमें मैं अुसे कैसे ढूँढ़ सकता था ? दूसरे दिन जब वह नहीं आया, तो बापूको अफसोस हुआ। कहने लगे — ‘कल ही अुसे कुछ दे देता तो अच्छा होता। परिश्रम करके जीनेवाला आदमी बार बार आनेके लिअे समय कहाँसे निकालेगा।’

३८

शायद १९१५की बात होगी। बापू कुछ लिख रहे थे। मैं पास बैठकर अुमर खय्यामकी रुबाअियातका अनुवाद पढ़ रहा था। फिट्ज़ जेरल्डके अनुवादकी तारीफ मैंने बहुत सुनी थी, किन्तु अुसे पढ़ा नहीं था। अपना अितना अज्ञान कम करनेकी दृष्टिसे मैंने वह किताब ली और चावके साथ पढ़ने लगा। किताब करीब करीब पूरी होनेको थी, अितनेमें बापूका ध्यान मेरी ओर गया। पूछा — 'क्या पढ़ रहे हो?' मैंने किताब बताअी।

नया ही परिचय था। बापू प्रत्यक्ष अुपदेश देना नहीं चाहते थे। अेक गहरी साँस लेकर अुन्होंने कहा — 'मुझे भी अंग्रेजी कविताका बड़ा शौक था। लेकिन मैंने सोचा कि मुझे अंग्रेजी कविता पढ़नेका क्या अधिकार है? जितना संस्कृतका ज्ञान मुझे होना चाहिये अुतना कहाँ है? अगर मेरे पास फ़ालतू समय है, तो मैं अपनी गुजराती लिखनेकी योग्यता क्यों न बढ़ाअूँ? मुझे आज देशकी सेवा करनी है, तो मेरा सारा समय मेरी सेवा-शक्ति बढ़ानेमें ही लगाना चाहिये।' कुछ ठहर कर फिरसे बोले — 'अगर देश-सेवाके लिअे मैंने कुछ त्याग किया है, तो यह अंग्रेजी साहित्यका शौक। पैसे और career के त्यागको तो मैं त्याग ही नहीं समझता। अुसकी ओर मेरी रुचि थी ही नहीं। लेकिन अंग्रेजी साहित्यका तो शौक पूरा पूरा था। लेकिन मैंने ठान लिया है कि यह भी मुझे छोड़ना ही चाहिये।'

मैं समझ गया। मैंने फिट्ज़ जेरल्ड अुसी समय बाजूको रख दिया।

* * *

बापूके अुस अुपदेशका मैं पालन नहीं कर सका हूँ, किन्तु फिट्ज़ जेरल्ड तो फिर पूरा किया ही नहीं। और सामान्य तौर पर कह सकता हूँ कि जब तक गुजराती बोलने-लिखनेकी शक्ति नहीं आयी, तब तक मैंने कोअी अंग्रेजीकी किताब नहीं पढ़ी। गुजराती सीखनेके लिअे मुझे

कोशिश नहीं करनी पड़ी। वह तो गुजराती वातावरणमें रहनेसे और गांधीजीके लेख पढ़नेसे ही मुझे आने लगी।

मैं गुजराती लिखने लगा अुस समय कोअी गुजराती शब्द नहीं मिलता, तो अुस जगह आसान संस्कृत शब्द बिठा देता। फलतः मेरी गुजराती शैली आसान होते हुअे भी संस्कृत प्रचुर प्रौढ़ बन गयी। और विद्वान और आम जनताके बीच मैंने वही लेकर प्रवेश किया।

बापूकी सूचनाका मुख्य लाभ यह हुआ कि जिस शक्तिसे पहले मैं अंग्रेजी शब्द ढूँढ़ता था और हरअेक शब्दकी प्रकृति और खूबी समझनेकी कोशिश करता था, वह सब मैंने गुजरातीकी ओर मोड़ दी।

३९

मैं आश्रममें गया तब मुझे न गुजराती आती थी न हिन्दी। दोनों भाषायें मैंने सुनी तो थीं, लेकिन बोलने-लिखनेका तनिक भी अभ्यास नहीं था। पढ़ाते समय अलबत्ता मैं हिन्दीमें पढ़ाता था, क्योंकि वहाँ कोअी मेरे जितनी भी हिन्दी नहीं जानता था। मैं जानता था कि मैं सुरक्षित भूमि पर नहीं हूँ, अिसलिअे थोड़ी हिम्मत होने पर गुजरातीमें बोलने लगा। फिर जब 'नवजीवन'में कभी कॉलम दो कॉलमकी कमी पड़ती, तो स्वामी आनन्द मुझसे कुछ लिखवाकर ठीकठाक करके छाप देते थे। लेकिन सन् २२ में जब बापू जेलमें गये, तब तो मुझे साराका सारा 'नवजीवन' भरना पड़ता था।

जेलमें बापूने सुना होगा कि मैं 'नवजीवन'को ठीक सँभाल रहा हूँ, तो अेक दिन अुनका पत्र आया। अुसमें लिखा था — 'जिस तरह अंग्रेजीमें शब्दोंका spelling (हिज्जे) निश्चित है, वैसा गुजरातीमें नहीं है। मराठी, बंगला, तामिल, अुर्दू आदि भाषाओंमें भी शुद्ध हिज्जोंका आग्रह मैं देखता हूँ। अेक गुजराती ही अैसी भाषा है, जिसमें हर आदमी जैसा मनमें आया वैसे हिज्जे कर लेता है। अिससे गुजराती भाषा भूत-जैसी हो गयी है। (भूत कलेवरके अभावमें हवामें भटकता रहता है)। अुसकी दुर्दशा दूर करनेका काम अगर तुम्हारा

नहीं है तो किसका है ? मुझे अेक अैसा कोश बना दो कि जिसमें गुजरातीके सब शब्द हों और हर अेक शब्दके हिज्जे नियमके अनुसार शुद्ध हों। किसीको भी शंका हुअी तो तुम्हारे कोशमें देखकर वह शुद्ध हिज्जे लिख सकेगा। अंग्रेजीमें तो हम अैसा ही करते हैं न ?'

बापूका यह खत पाकर मैं आश्चर्यचकित हो गया। बादमें तो मैं भी जेलमें ले जाया गया। जब मैं छूटा तो थोड़े ही दिनों बाद बापू भी छूटे। मिलने पर मैंने अुनसे कहा — 'बापूजी, आपने मुझसे यह कैसी अपेक्षा की ? न गुजराती मेरी जन्मभाषा है, न अुसके साहित्यका मैंने अध्ययन किया है। व्याकरण तो मैं जानता भी नहीं।'

बापू बोले — 'यह तो सब ठीक है। मैंने कब कहा कि यह सब तुम्हें अकेले ही करना चाहिये। जिसकी मदद चाहिये अुसकी लो, जिससे करा सकते हो अुससे कराओ। मैंने तो यह काम तुम्हें सौंप दिया है, तुमसे माँगूँगा। अिस चीजका महत्त्व तुम समझो और अेक भी भूल न रहे अैसा निर्दोष कोश देकर गुजरातीके हिज्जोंको अेक सिलसिलेसे बना दो। यह काम तुम्हारा है।'

मैंने सिर झुकाया। मैं जानता था कि 'संन्यासीको अगर शादी करनी है, तो सिर पर चोटी रखानेसे प्रारम्भ करना चाहिये'। मैं गुजरातीका व्याकरण लेकर बैठा। पिछले चालीस बरससे हिज्जोंके बारेमें जो चर्चा हुअी थी सब अिकट्ठी की। महादेवभाअी, नरहरिभाअी और मैं, अैसे तीन आदमियोंकी कमेटी मैंने मुकर्रर की और आखिरकार अनेक मित्रोंकी मददसे पाँच बरसकी मेहनतके बाद बापूको अेक शुद्ध जोड़णी कोश अर्पण किया।

बापू बड़े संतुष्ट हुअे। 'नवजीवन'में अुन्होंने लिखा कि 'अब आगे किसीको गुजरातीमें मनमानी जोड़णी करनेका अधिकार नहीं है'।

अुनके संकल्पके प्रभावसे आज वही जोड़णी कोश गुजरात भरमें प्रमाणरूप हो गया है। बम्बअी सरकारका शिक्षा विभाग, बम्बअी युनिवर्सिटी, गुजरात काठियावाड़के देशी राज्य, सबने अुसीका प्रामाण्य माना है। यहाँ तक कि Cross Word Puzzle में भी हमारा जोड़णी कोश ही सब झगड़ोंको तय करता है।

जब बापू दक्षिण अफ्रीकासे हिन्दुस्तान लौटने लगे, तब अुन्होंने सोचा कि मुझे अिस देशसे कुछ भी धन नहीं लेना चाहिये। अंग्रेज जब अपना कमाया हुआ सब धन हिन्दुस्तानसे विलायत ले जाते हैं, तब हमें कैसा बुरा लगता है? हम अुसे अन्याय और लूट कहते हैं। तब दक्षिण अफ्रीकाका धन हमें हिन्दुस्तान ले जानेका क्या अधिकार है?

बस, अिसी विचारसे अुन्होंने दक्षिण अफ्रीकामें जो कुछ भी कमाया था, सबका वहीं पर ट्रस्ट बना दिया और वहींके सार्वजनिक कार्यके लिअे अुसका विनियोग हो अैसा प्रबन्ध कर दिया। वहाँसे चलते समय अुन्होंने साथ लिये सिर्फ़ अपने मिले हुअे मानपत्र और भेंटकी किताबें। किताबें तो जब सत्याग्रह आश्रमकी स्थापना हुअी, तब सारी आश्रमको दे दी गयीं। और जब आश्रमका विसर्जन हुआ, तब अहमदाबादकी म्युनिसिपेलटीको दे दीं। कोअी बीस हजार किताबें होंगी। और मानपत्र तो बिचारे अिधर अुधर पड़े पड़े नष्ट हो गये।

हिन्दुस्तानमें लौटने पर बापूके सामने अपनी पैतृक सम्पत्तिका सवाल आया। पोरबन्दर और राजकोटमें अुनके घर थे। सबमें गांधी खानदानके लोग रहते थे। बापूने अुन सब रिश्तेदारोंको बुलाकर कहा कि पैतृक सम्पत्तिमें मेरा जो भी कुछ हिस्सा है, वह मैं आपके नाम छोड़ता हूँ। अितना ही नहीं, अुन्होंने जो त्यागपत्र लिखा अुस पर अपने चारों पुत्रोंके भी हस्ताक्षर करवा दिये कि हम सब अिसीके साथ अपना अधिकार भी छोड़ देते हैं।

अिस तरह बापूने अपनेको और अपने पुत्रोंको मुक्त किया।

४१

सन् १९२७ की बात है। खादी-कार्यके लिअे चन्दा अिकट्ठा करनेके लिअे राजाजीने दक्षिणमें बापूके दौरेका प्रबन्ध किया था। अिसी सिलसिलेमें हम सीलोनकी भी यात्रा कर आये। सीलोनमें बापूके बड़े ही प्रभावशाली व्याख्यान हुअे। अेक दिन, शायद जाफनाकी बात है, बापू बुद्ध भगवानके कार्य पर बोल रहे थे। बुद्ध भगवानकी कैसी परिस्थितियाँ थीं, किस तरह अुन्हें अुसमें अपना मिशन मिला, अिसीकी चर्चा थी। बापू अपने विषयमें अितने तल्लीन हो गये थे कि अेक स्थानपर, जहाँ बुद्धके बारेमें अुन्हें कहना चाहिये था then he saw, वहाँ निकल गया then I saw. पता नहीं यह गलती अुनके ध्यानमें आयी या नहीं। व्याख्यान बड़ा ही प्रभावशाली रहा।

रातको बापूके व्याख्यानकी हम चर्चा कर रहे थे। महादेवभाअी, राजाजी और मैं। मैंने कहा — 'आजके व्याख्यानमें Star of the East वाले कृष्णमूर्ति-जैसी बात हुअी। अितना कहना था कि तुरन्त ही राजाजी बोल अुठे — 'Did you also mark that Kaka?'

हम दोनों हँस पड़े।

मैंने कहा — 'व्याख्यानमें बापूका बुद्ध भगवानके साथ अैसा तादात्म्य हो गया था कि प्रथम पुरुषी सर्वनाम यों ही निकल गया। अिसका कोअी गूढ़ अर्थ करनेकी जरूरत नहीं। जो कार्य बुद्ध भगवानने अपने जमानेके लिअे किया, वही कार्य आजकी परिस्थितियोंके अनुसार बापू नयी भूमिका पर कर रहे हैं, अितना ही अनुमान निकालना बस है।

'बापू अगर अपनेको बुद्ध भगवानका अवतार मानने लगेंगे, तो मुझे अुसमें खतरा दिखायी देगा। मैं नहीं मानता कि बापू कभी अपनेको बुद्धका अवतार मान सकते हैं। बापू कभी के हिन्दू गिरोहके परे हो

चुके हैं, किन्तु अुन्होंने अुससे अपना सम्बन्ध नहीं तोड़ा है। अुनको आखिर तक हिन्दू ही रहना है। हिन्दू रहकर ही वे दुनियाकी सेवा करेंगे और हिन्दू-धर्मको अपने अर्थके हिन्दू-धर्म जैसा ही बनायेंगे। अगर आज-जैसी गलती फिर हुअी, तो मुझे अपना अभिप्राय बदलना पड़ेगा।'

अैसी गलती फिर कभी नहीं हुअी।

४२

रौलेट अेक्टके विरुद्ध बापूने जो आन्दोलन अुठाया, अुसके पहलेकी बापूकी गम्भीर बीमारीका जिक्र मैं कर चुका हूँ। रातकी परेशानीके बाद सुबह बापू हम लोगोंसे मिले और अहिंसाका सन्देश हिन्दुस्तानको देनेको कहा, यह भी लिख चुका हूँ। अुसके बाद शामकी प्रार्थनामें हमारे संगीतशास्त्री नारायणराव खरेने भजन शुरू किया :

"गुरु बिन कौन बतावे बाट।
बड़ा विकट यम घाट। गुरु बिन०।"

मुझे लगा कि अैसे मौके पर अैसा भजन पसन्द नहीं करना चाहिये था। बापू अपनेको मृत्युके समीप पहुँचा हुआ मानते थे। अगर अैसे वक्त हम कहें कि आपको तो गुरु नहीं मिले हैं, यम घाट आप कैसे पार करेंगे, तो अैसे भजनसे बापूके मनकी ग्लानि ही बढ़ेगी।

अनसूया बहनको भी भजन ठीक न जँचा। लेकिन अुनका कारण कुछ और था।

कुछ भी हो, बापू हमेशा गुरुकी खोजमें रहते हैं अिस बातकी चर्चा हम लोगोंमें बढ़ी। गोखले बापूके गुरु थे, किन्तु थे केवल राज-नैतिक क्षेत्रके ही। अितना भी हम अिसलिअे मानते हैं कि बापूने अनेक बार स्वयं अैसा कहा है। आज हम विश्लेषण करते हैं, तो गोखलेकी और बापूकी राजनीतिमें कोअी साम्य नहीं दीख पड़ता। मैं तो मानता हूँ कि जब बापू गोखलेजीसे पहले पहल मिले, अुस वक्त अुनकी विभूति-पूजाकी

अुम्र थी। अुन्हें अपने लिअे कोअी विभूति (Hero) चाहिये थी। गोखलेजीने असाधारण सहानुभूति बतायी और अुनकी कदर की, अिसीसे अुन्होंने गोखलेकी राजनीतिमें अपने सब आदर्श देख लिये। कुछ भी हो। गोखले बापूके जीवन गुरु नहीं थे।

श्रीमद् राजचन्द्र (जो बम्बअीके अेक शतावधानी जौहरी थे) की धर्मनिष्ठा और आत्मप्राप्तिकी बेचैनी देखकर बापूने अुनसे बहुतसे प्रश्न पूछे थे और समाधान भी पाया था। तबसे 'श्रीमद्'के शिष्य तो यह कहते नहीं थकते कि राजचन्द्र गांधीजीके गुरु थे।

बापूने कुछ हद तक अिस बातको स्वीकार भी किया। लेकिन जब यह बात बहुत आगे बढ़ी, तब अुन्हें जाहिर करना पड़ा कि मैं राजचन्द्रको मुमुक्षु तो जरूर मानता हूँ, किन्तु साक्षात्कारी पुरुष नहीं।

किसी समय बापूने अपने किसी लेखमें लिखा था कि 'मैं गुरुकी खोजमें हूँ। क्योंकि गुरु मिलने पर मनुष्यका अुद्धार हो ही जाता है'। बस, अितना लिखना था कि अुनके पास सैकड़ों चिट्ठियाँ आने लगीं। कोअी लिखता था, अमुक जगह अेक बड़े महात्मा रहते हैं, वे बड़े योगी हैं, अुन्हें सब सिद्धियाँ प्राप्त हैं, आप अुनके पास जाकर अुपदेश लीजिये। कोअी किसी सत्पुरुषकी सिफारिश करता था। यदि किसीने खुदकी ही सिफारिश करते हुअे बापूके गुरु बननेकी तैयारी दिखायी हो तो मैं नहीं जानता। लेकिन बापूके अुद्धारकी अिच्छासे लोगोंने अुन्हें अनेक मार्ग दिखाये। अन्तमें बापूको जाहिर करना पड़ा कि 'जिस गुरुकी खोजमें मैं हूँ वह स्वयं भगवान ही है। भगवान ही मेरे गुरु बन सकते हैं, जिन्हें पानेके बाद कोअी साधना बाकी भी नहीं रहती। मेरी यह सारी जिन्दगी, सारी प्रवृत्ति अुस गुरुकी खोजके लिअे ही है।'

* * *

जिस तरह हम आश्रमवासी गांधीजीको बापू कहते हैं, अुसी तरह शान्तिनिकेतनमें लोग रविबाबूको गुरुदेव कहते थे। अब गांधीजीका यह स्वभाव या रिवाज है कि जो व्यक्ति जिस नामसे मशहूर हो जाय, वही नाम वे भी स्वीकार कर लेते हैं। रविबाबूका जिक्र वे 'गुरुदेव'के नामसे करने

लगे। तिलकजीको ही लीजिये: पहले बापू अुन्हें तिलक महाराज कहते थे। बादमें अुन्होंने देखा कि महाराष्ट्रमें लोग अुन्हें लोकमान्य कहते हैं, तो अुन्होंने भी लोकमान्य कहना शुरू कर दिया। यही बात है मि० जिन्नाके बारेमें भी। मि० जिन्नाके अनुयायी अुन्हें कायदे आजम कहते हैं, अिसलिअे बापू भी अुनका जिक्र अुसी नामसे करते हैं। श्री वल्लभभाअी पटेलको गुजरातके कार्यकर्ता श्री मणिलाल कोठारीने सरदार कहना शुरू किया और लोग भी अुन्हें सरदार कहने लगे। बापूने यह बात सुनी तो अुन्होंने भी वही नाम चलाया।

अिन बड़े लोगोंकी बात तो छोड़ दीजिये। मैं अपने परिवारमें, विद्यार्थियोंमें और मित्र मण्डलीमें काकाके नामसे मशहूर हूँ। यहाँ तक कि जब मेरा पूरा नाम दत्तात्रेय बालकृष्ण कालेलकर कहीं लिखा जाता है, तो लोग मुझे पूछते हैं कि क्या ये दत्तात्रेय बालकृष्ण तुम्हारे कोअी रिश्तेदार हैं? बस, अिसी परसे बापू भी मुझे काका ही कहते हैं। अुनकी चिट्ठियोंमें भी 'चिरंजीव काका'से प्रारम्भ करते हैं और समाप्त करते हैं 'बापूके आशीर्वाद' से। नामके लिअे 'काका' शब्द केवल विशेष नाम रहा है, अुसका कोअी विशेष अर्थ नहीं है। अिसी तरह, रथीबाबू (रविबाबूके लड़के)को अथवा श्री विधुशेखर शास्त्रीजीको लिखते समय रविबाबूका जिक्र गुरुदेव नामसे ही करते हैं, क्योंकि वही नाम अुन लोगोंको प्रिय है। ज्यादा नहीं जाननेवाले लोगोंने अिससे अनुमान लगाया कि गांधीजी रविबाबूको अपना गुरुदेव मानते हैं!

अिसी सिलसिलेमें अेक छोटा-सा प्रसंग यहाँ लिख देता हूँ। मैं शान्तिनिकेतन गया, तो सबसे पहले गुरुदेवसे मिला। अुनसे कहा कि मैंने आपके गीतांजलि आदि ग्रंथ पढ़े हैं, अब मैं आपके कुछ आध्यात्मिक अनुभव जानना चाहता हूँ। मैं विशेष प्रश्न पूछूँ अुसके पहले वे कहने लगे — 'लोग मुझे गुरुदेव तो कहते हैं, लेकिन मैं गुरुमें विश्वास नहीं करता। मैं नहीं मानता कि कोअी किसीका गुरु बन सकता है, कोअी किसीको मार्ग बता सकता है। अध्यात्म अेक अैसा क्षेत्र है कि जिसमें हरअेकको अपने लक्ष्यकी ओर जानेका रास्ता भी अपने आप तैयार करना पड़ता

है। अध्यात्म हमेशा unchartered sea के जैसा क्षेत्र ही रहा है। मेरी साधना मुझे मेरे कवि होनेसे मिली है। जब मैं 'सत्यं ज्ञानं अनन्तं ब्रह्म' कहता हूँ, तब यह सारा विश्व मुझे सत्य रूप दीख पड़ता है। अिस विश्वको अिन्कार करनेवाला मायावाद मेरे पास नहीं है।' अिसी तरह अनेक बातें कहीं। सारे प्रवचनकी रिपोर्ट देनेका यह स्थान नहीं है। मुझे अितना ही बताना है कि गुरुदेवके नामसे अपनी मण्डलीमें जो हमेशा पुकारे जाते थे, वे स्वयं गुरु-जैसी किसी वस्तुको मानते ही नहीं थे।

४३

१९२१में बेजवाड़ाकी अखिल हिन्द कांग्रेस महासमिति (A. I. C. C.) ने तय किया था कि लोकमान्य तिलकके स्मारकमें अेक करोड़ रुपया अिकट्ठा किया जाय। अुसी सिलसिलेमें धन अिकट्ठा करनेकी कोशिशें चल रही थीं। अेक दिन श्री शंकरलाल बैंकरने आकर कहा — 'हमारे प्रान्त (बम्बअी) में जितनी मुख्य मुख्य नाटक कम्पनियाँ हैं, वे सब मिलकर अपने सबसे अच्छे नटों द्वारा अेक किसी अच्छे नाटकका अभिनय करेंगी। अुस दिन अगर बापू थियेटरमें अुपस्थित हो जायँ, तो वे लोग अुस खेलकी सारी आमदनी तिलक स्वराज्य फण्डमें देनेके लिअे तैयार हैं।' अुन्होंने आगे कहा — 'हजारोंकी नहीं, लाखोंकी बात है, क्योंकि टिकटोंकी मनमानी कीमत रखेंगे।' बापू अेक क्षणका भी विलंब किये बगैर बोले — 'यह नहीं हो सकता। मैं कभी धंधादारी नटोंके नाटक देखने नहीं जाता। कोअी मुझे करोड़ रुपया भी दे, तो भी मैं अपना नियम नहीं तोड़ सकता।'

शंकरलालजीका प्रस्ताव जैसाका तैसा रह गया।

सन् २१ की ही बात है। अहमदाबादमें गुजरात विद्यापीठकी स्थापना हुअी। स्थापनामें मेरा काफी हाथ था। अुन दिनों मैं दिनरात भूत-जैसा काम करता था। अेक दिन विद्यापीठके नियामक मण्डलकी बैठक थी। अुसमें मि० अेंड्रयूज़ भी आये थे। अुन्होंने सवाल छेड़ा — 'विद्यापीठमें हरिजनोंको तो प्रवेश रहेगा न?' मैंने तुरन्त जवाब दिया — 'हाँ, रहेगा।' किन्तु हमारे नियामक मण्डलमें अैसे लोग थे, जिनकी अस्पृश्यता दूर करनेकी तैयारी नहीं थी। हमारी सम्बद्ध संस्थाओंमें अेक था मॉडल स्कूल। अुसके संचालक अिस सुधारके लिअे तैयार नहीं थे। और भी लोग अपनी अपनी कठिनाअियाँ पेश करने लगे। अुस दिन यह प्रश्न अनिश्चित ही रहा। अितना ही तय हुआ कि अिसके बारेमें बापूजीसे पूछेंगे। मैं निश्चिन्त था। आखिर बापूसे पूछा गया। अुन्होंने भी वही जवाब दिया जो मैंने दिया था।

अिस बातकी चर्चा गुजरात भरमें होने लगी। बम्बअीके चन्द वैष्णव धनिकोंने बापूके पास आकर कहा — 'राष्ट्रीय शिक्षाका कार्य बड़ा धर्म कार्य है। हम अुसमें आप कहें अुतने पैसे दे सकते हैं, किन्तु हरिजनोंका सवाल आप छोड़ दीजिये। वह हमारे समझमें नहीं आता।' आये हुअे वैष्णव कुछ पाँच सात लाख रुपये देनेकी नियतसे आये थे। बापूजीने अुन्हें कहा — 'विद्यापीठ निधिकी बात तो अलग रही, कल अगर कोअी मुझे अस्पृश्यता कायम रखनेकी शर्त पर हिन्दुस्तानका स्वराज्य भी दे, तो अुसे मैं नहीं लूँगा।' बेचारे वैष्णव धनिक जैसे आये थे वैसे ही चले गये।

४५

आश्रमके प्रारम्भके दिनोंमें आसपास हमें अच्छा दूध नहीं मिलता था। अिसलिअे हमने अपना प्रबन्ध कर लिया, अच्छी अच्छी गायें और भैंसें रख लीं।

कुछ दिनोंके बाद बापूने हमें समझाया कि हमें गोरक्षा करनी है। भैंसको रखकर हम गायको नहीं बचा सकते। दोनोंको आश्रय देकर हम दोनोंका नाश कर रहे हैं। गायकी सबसे बड़ी प्रतिस्पर्धी है भैंस। बैल तो अपनी सेवाके बल पर बच जाता है, और भैंस अपने दूध, घीकी अधिकताके बल पर। रही गाय और भैंसके पाड़े। सो गाय कतल की जाती है और भैंसके पाड़े बचपनमें ही मार डाले जाते हैं।

नतीजा यह हुआ कि आश्रमसे सब भैंसें हटायी गयीं। केवल गोशाला ही रही।

अेक दिन गायका अेक बछड़ा बीमार हुआ। हम लोगोंने अुसकी दवाके लिअे जितनी कोशिशें हो सकती थीं कीं। देहातोंसे पशुरोगोंके जानकार आये। व्हेटरनरी डॉक्टर आये। जितना हो सकता था सब कुछ किया। किन्तु बछड़ा ठीक नहीं हुआ।

बछड़ेके अन्तिम कष्ट देखकर बापूने हम लोगोंके सामने प्रस्ताव रखा कि अिस मूक जानवरको अिस तरह पीड़ा सहन करते रखना घातकता है। अुसे मृत्युका विश्राम ही देना चाहिये।

अिस पर बड़ी चर्चा चली। श्री वल्लभभाअी अहमदाबादसे आये। कहने लगे — 'बछड़ा तो दो-तीन दिनमें आप ही मर जायेगा, किन्तु अुसे आप मार डालेंगे तो नाहक झगड़ा मोल लेंगे। देशभरके हिन्दू समाजमें खलबली मचेगी। अभी फंड अिकट्ठा करने बम्बअी जा रहे हैं। वहाँ हमें कोअी कौड़ी भी नहीं देगा। हमारा बहुतसा काम रुक जायेगा।'

बापूने सब कुछ ध्यानसे सुना और अपनी कठिनाअी पेश करते हुअे कहा — 'आपकी बात सब सही है। लेकिन बछड़ेका दुःख देखते हम

कैसे बैठ सकते हैं ? हम अुसकी जो अन्तिम सेवा कर सकते हैं, वह न करें तो धर्मच्युत होंगे।'

अैसी बातोंमें वल्लभभाअी बापूसे कभी वादविवाद नहीं करते थे। वे चुपचाप चले गये। फिर बापूने हम सब आश्रमवासियोंको बुलाया। हमारी राय ली। मैंने कहा — 'आप जो करते हैं सो तो ठीक ही है। किन्तु अगर मुझे अपनी राय देनी है, तो मैं गौशालामें जाकर बछड़ेको प्रत्यक्ष देख लूँ तभी अपनी राय दे सकता हूँ।' मैं गौशालामें गया। बछड़ा बेभान पड़ा था। मैं अपनी राय तब नहीं कर पाया। अिसलिअे वहाँ कुछ ठहरा। बादमें जब देखा कि बछड़ा जोर जोरसे टाँगें झटक रहा है, तो मैं बापूके पास गया और कह दिया — 'मैं आपके साथ पूर्णतया सहमत हूँ।' बापूने किसीको चिट्ठी लिखकर गोली चलाने वाले आदमियोंको बुलवाया। अुन्होंने कहा — 'गोलीसे मारनेकी जरूरत नहीं। डॉक्टर लोगोंके पास अैसा अिन्जेक्शन रहता है जो लगाते ही प्राणी शान्त हो जाता है।' अुस पर अेक पारसी डॉक्टर बुलवाया गया। अुसने अुस पीड़ित बछड़ेको 'मरण' दे दिया।

अिस पर तो देशभरमें खूब हो-हल्ला मचा था। बापूको कअी लेख लिखने पड़े थे। सारा हिन्दू समाज जड़-मूलसे हिल गया था। बापूकी अनन्य धर्मनिष्ठा और गोभक्तिके कारण ही वे अिस आन्दोलनसे बच सके।

४६

पंजाबके अत्याचार, खिलाफतका मामला और स्वराज्य प्राप्ति अिन तीन बातोंको लेकर बापूने अेक देश-व्यापी आन्दोलन शुरू किया। भारतके अितिहासमें शायद यह अपूर्व आन्दोलन था, जिसमें हिन्दू और मुसलमान अेक हुअे थे। यह अद्‌भुत दृश्य देखकर अंग्रेज भी घबरा गये। सरकारको लगने लगा कि गांधीजीके साथ कुछ न कुछ समझौता करना ही चाहिये। वाअिसरायने बापूको मिलनेके लिअे बुलवाया।

पंजाबका अत्याचार तो हो ही चुका था। अुसके बारेमें किसीको सजा दिलानेकी शर्त भी बापूने देशको नहीं रखने दी थी। सरकार अपनी भूल स्वीकार कर लेती, तो मामला तय हो जाता। बाकी रही थीं दो बातें। खिलाफत पर वाअिसरायकी दलील थी कि यह सवाल हिन्दुस्तानका नहीं, अन्तरराष्ट्रीय राजनीतिका है। अुसमें कअी नाजुक बातें भरी हुअी हैं। अुसे छोड़ दो और केवल स्वराज्यकी बातें करो, तो आपसे समझौता हो जायगा। बापूने कहा — 'यह नहीं हो सकता। हिन्दुस्तानके मुसलमान हिन्दुस्तानका महत्वपूर्ण अंग हैं। अुनके दिलमें जो अन्यायकी चोट है, अुसके प्रति मैं अुदास नहीं रह सकता।'

अिसी पर समझौतेकी बात टूट गयी। देशके बड़े बड़े नेताओंने खानगी बातचीतमें बापूको दोष दिया। अुनका कहना था कि खिलाफतकी बात हिन्दुस्तानकी है ही नहीं। अुसे छोड़ देते तो क्या हर्ज था। स्वराज्य तो मिल जाता! (अुन दिनों स्वराज्यकी हमारी कल्पना आज-जैसी शुद्ध और निश्चित नहीं थी। जो कुछ मिलता अुसे ही शायद लोग स्वराज्य समझकर ले लेते और बड़ी राजनीतिक प्रगति मान लेते।) लेकिन बापूके सामने हमारे राजनैतिक चारित्र्यका प्रश्न था। मुसलमानोंको साथ दिया, अुनका दुःख अपना दुःख बनाया और अब अपनी चीज मिलते ही अुनका हाथ छोड़ देना यह तो दगाबाज़ी कहलाती। अिस तरह दगाबाजी करके जो भी मिले वह बापूकी नजरमें मलिन ही था। अिसीलिअे अपना शुद्ध निर्णय वाअिसरायको कहते अुन्हें तनिक भी संकोच नहीं हुआ।

४७

चि० चन्दनकी मेरे लड़केके साथ शादी तय हुअी थी। वह आक्सफोर्डमें पढ़ता था और चन्दन अपनी अमेरिकाकी पढ़ाअी पूरी करके हिन्दुस्तान लौटी थी। वह वर्धा आयी। बापू कहने लगे — 'यह चन्दन तो अंग्रेजी सीखकर विदुषी होकर आयी है। यह क्या काम की? अुसे हिन्दी तो आती ही नहीं। शादी होनेके बाद क्या पढ़ेगी? अभीसे अुसे हिन्दी सिखानेका कुछ प्रबन्ध करना चाहिये।' हम दोनोंने

तय किया कि अुसे देहरादून कन्या गुरुकुलमें भेज दें। पूज्य बाको वहाँ अुत्सवके निमित्त जाना ही था। मुझे भी अुन्होंने बुलाया था। हम चन्दनको साथ ले गये। वहाँके लोगोंने अुसे हिन्दी पढ़ानेका प्रबन्ध किया और बदलेमें अुससे पढ़ानेका काम भी लिया। वह बोस्टन विश्वविद्यालयकी सोशियॉलाजी (समाजशास्त्र) में अेम० अे० थी। अितनेमें बापूका राजकोटका सत्याग्रह शुरू हुआ। चन्दन काठियावाड़की लड़की ठहरी। अुससे कैसे रहा जा सकता था। वह सत्याग्रहमें शरीक होनेके लिअे देहरादूनसे राजकोट गयी। अितनेमें समझौता होकर सत्याग्रह स्थगित हो गया और बापू वर्धा आ गये। चन्दन राजकोटमें कुछ बीमार हो गयी।

वर्धामें चन्दनका पत्र आया कि मैं बीमार हूँ। अुस दिन बापू वर्धासे बम्बअी जा रहे थे। मैं बापूको पहुँचाने स्टेशन पर गया था। मैंने चन्दनके बीमार होनेकी बात सुनायी। बापू तफसील पूछने लगे। मैंने चन्दनका पत्र ही अुनके हाथमें दे दिया। स्टेशन पर भीड़ होनेके कारण वे अुसे पढ़ न सके, साथ ही ले गये।

दूसरे दिन सुबह बम्बअी पहुँचनेके पहले ही अुन्होंने चन्दनको अेक तार भेजा जिसमें क्या दवा करनी चाहिये, किन बातोंकी सँभाल रखनी चाहिये, सब कुछ लिखा था। और तुरन्त अहमदाबाद जाकर अमुक वैद्यकी दवा लेनेकी सूचना भी की थी। तार खासा १२-१५ रुपयोंका था। अैसे काममें चाहे जितना खर्च हो बापूको संकोच नहीं रहता है। और जहाँ कंजूसी करने बैठते हैं वहाँ तो पाअी पाअीकी काट कसर करते हैं।

४८

अेक समय बापू दार्जिलिंगमें थे। बंगालमें प्रान्तीय परिषद् होनेवाली थी। अुसमें चित्तरंजन दासका किसी पक्षसे बड़ा विरोध होनेवाला था। अुन्होंने बापूको अुपस्थित रहनेके लिअे कहा था। बापूने स्वीकार भी किया था।

निश्चित समय पर बापू दार्जिलिंगसे निकलनेके लिअे प्रस्तुत हुअे। (बापूकी गफलत नहीं थी, मोटरकी कोअी गड़बड़ी हुअी होगी या क्या,

मुझे ठीक याद नहीं है।) लेकिन स्टेशन पर पहुँचे तो देखा कि मेल चली गयी है। अब क्या किया जाय? बापूने सोचा यह अच्छा नहीं हुआ। अुन्होंने तुरन्त रेलवे स्टेशनसे ही तार भेजकर अेक स्पेशल ट्रेन मँगवायी और चले। अिसमें कुछ समय तो लगा ही। अुधर जहाँ कान्फरेन्स होनेवाली थी, वहाँ लोग स्टेशन पर बापूको लेने गये थे। अुन्होंने देखा बापू डाक-गाड़ीमें नहीं हैं। दासबाबू बड़े मायूस हो गये थे। वह स्वाभाविक भी था।

कान्फरेन्सकी कार्रवाअी शुरू हो गयी थी। अितनेमें पंडालके सामने ही रेलवे लाअिन पर स्पेशल ट्रेन आकर खड़ी हो गयी। बापू अुतरे। बापूको देखकर दासबाबूकी आँखोंमें आँसू भर आये। विरोध हवा हो गया। और अुस दिनका काम कल्पनातीत सफलतासे सम्पन्न हुआ।

४९

यह तो हुअी बड़ोंकी बात।

अेक समय हम मद्रासकी ओर खादी दौरेमें घूम रहे थे। शायद कालीकट पहुँचे थे। वहाँसे अुत्तरकी ओर नीलेश्वर नामक अेक छोटा-सा केन्द्र है। वहाँ मेरा अेक विद्यार्थी बड़ी ही प्रतिकूल परिस्थितिमें खादीका कार्य करता था। अुसे बापूके आगमनकी आशा थी। अुसने स्वागतकी तैयारी भी की थी। पर कार्यक्रममें कुछ अैसी बाधा पड़ी कि नीलेश्वरका कार्यक्रम स्थगित करना पड़ा। बापूसे यह सहा न गया; कहने लगे — 'बेचारा कितनी श्रद्धासे काम कर रहा है, अेक कोनेमें पड़ा है, किसीकी सहानुभूति नहीं। वहाँ तो मुझे जाना ही चाहिये।' बापूका स्वास्थ्य भी अुन दिनों अच्छा नहीं था। राजाजीने बताया कि किसी भी सूरतसे नीलेश्वर जाना सम्भव नहीं है। बापूने अुत्तेजित होकर कहा — 'सम्भव क्यों नहीं है? स्पेशल ट्रेनका प्रबन्ध करो। अुस लड़केकी श्रद्धाकी मुझे कीमत है।' राजाजी खर्च करनेके लिअे तैयार थे, किन्तु बापूको काफी कष्ट होनेका डर था। अुनके स्वास्थ्यको भी खतरा था। राजाजी बापूको समझानेकी कोशिश करने लगे। महादेवभाअीने भी समझाया। अन्तमें मैंने कहा — "राजाजीकी बात मुझे भी ठीक लगती है। मैं अुस

लड़केको लम्बा चौड़ा खत लिखकर समझा दूँगा कि आप तो आनेवाले थे, हम ही लोगोंने रोक लिया।" बापूने जब देखा कि मैं भी राजाजीके पक्षका हो गया तो हार गये, और दुःखके साथ मान गये।

मेरा विद्यार्थी सारी परिस्थिति समझ तो गया। बापू नहीं आये यह अच्छा ही हुआ, अैसा अुसने लिखा भी, लेकिन मैं जानता हूँ कि वह राजाजीको क्षमा नहीं कर सका। बेचारे राजाजी अिस तरह अनेकोंकी गलतफहमीके शिकार हुअे हैं।

५०

सादगीसे रहना और अपने हाथसे काम करना, अिन दोनों बातोंमें बापूको किसी विशेष प्रयाससे मनको तैयार करना पड़ा हो अैसा नहीं लगता। विलायतमें जब वे विद्यार्थी थे, तब अन्नाहार (शाकाहार) के होटलोंको ढूँढ़ते ढूँढ़ते चाहे जितनी दूर पैदल ही जाते थे। बादमें तो अपना भोजन अपने हाथसे ही पकाने लगे। अिस स्वयंपाक प्रयासकी वजहसे ही श्री केशवराव देशपांडेकी और बापूकी विलायतमें दोस्ती हुअी थी। दोनों मिलकर दलिया (porridge) पकाते थे।

बापू जब बैरिस्टर होकर हिन्दुस्तान आ गये, तब भी वे बम्बअीमें घरसे कोर्ट तक पैदल ही जाया करते थे।

दक्षिण अफ्रीकामें जब अुन्होंने देखा कि गोरा हजाम अुनके बाल काटनेको तैयार नहीं है, तो अुन्होंने अुसकी खुशामद करनेके बजाय अपने हाथसे ही अपने बाल जैसे तैसे काट लिये और कोर्टमें भी वैसे ही पहुँचे। गोरे बैरिस्टरोंने जब मसखरी करते हुअे पूछा कि मि० गांधी क्या चूहेने तुम्हारे बाल काटे हैं? तब अुन्होंने सारा किस्सा सुनाया।

अिसके बाद जब अुन्होंने टॉल्स्टॉय और रस्किनके ग्रंथ पढ़े, तब तो सादगी और स्वावलम्बनकी ओर और भी मुड़े। झुलू युद्धके दिनोंमें बापूने अेम्बुलन्स कोरका काम लेकर जो कष्ट अुठाया है, अुसका वर्णन अुन्होंने नहीं दिया है। किन्तु वह सारा अितिहास रोमांचकारी है। मनुष्य शरीर जितना सहन कर सकता है, अुससे भी अधिक

कष्ट अुठा कर अुन्होंने अेम्बुलन्स कोरका काम किया। अुन्हीं दिनों अुनके मनमें अिस विचारका अंकुर पैदा हुआ कि जो कोअी आदर्श सेवा करना चाहता है, अुसे ब्रह्मचर्यका पालन करना ही चाहिये। टॉल्स्टॉयके ग्रंथ पढ़ते हुअे 'ब्रेड लेबर'का खयाल भी अुन्हें जँच गया। अुन्हें विश्वास हो गया कि जिसे शरीर जिन्दा रखनेके लिअे अन्न खाना है, गरमी-ठंढसे बचनेके लिअे वस्त्र पहनना है, अुसे अन्न और वस्त्रकी अुत्पत्तिमें कुछ न कुछ हिस्सा लेना ही चाहिये। यदि हरिजनोंके कष्ट दूर करने हैं, तो पेशाब और टट्टी साफ करनेका काम भी हमें अपने हाथों करना चाहिये और अिस काममें वैज्ञानिक ढंग दाखिल करके सफाअीका काम भी अुच्च आदर्श तक पहुँचाना चाहिये। यह सब अुन्होंने समझा ही नहीं, अुसे अमलमें लाना भी शुरू कर दिया।

* * *

सन् १९१७ में बापू चम्पारन गये। वहाँ जब अुन्होंने किसानोंकी कैफियतें लिखनेका काम शुरू किया, तो बिहारके अनेक वकील अुनकी मददके लिअे आये। श्री राजेन्द्रबाबू, ब्रजबाबू आदि सब अुसी समयके बापूके साथी हैं। बापूने अुन सबको अपने साथ रहनेके लिअे कहा। वह निवास अेक किस्मका आश्रम ही हो गया। ये सब वकील अुसका खर्च चलानेके लिअे चन्दा देते थे। लेकिन आश्रम तो अेक कंजूस बनियेका ठहरा। हर बातकी जाँच होती थी। किसी समय बहुत मँहगे आम आ गये, तो सबको सुनाया गया कि यहाँ पर अिस तरहसे खर्च नहीं किया जा सकता, जब आम सस्ते हों तभी मँगाये जायँ। फिर बादमें कपड़े भी अपने हाथसे धोनेका फर्मान निकाला गया। यह सब करनेमें बापूका सिद्धान्त यही था कि खर्च भले ये वकील ही देते हों, लेकिन जब पैसा दे दिया गया तो वह जनताका हो गया। अुसे हमें अेक गरीब और पीड़ित राष्ट्रके प्रतिनिधि बनकर ही खर्च करना चाहिये।

यों साधारण हालतमें बापू गरीबीके रहन सहनका कितना ही आग्रह क्यों न रखें, लेकिन किसी बीमारके लिअे तो वे चाहे जितने महँगे फल लाकर देते हैं। कभी कभी तो मरीजको महीनों केवल फलोंके रसपर ही रखते हैं।

८१

सन् १९३०में मैं बापूके साथ यरवडा जेलमें था। अब मैं जो बात कहनेवाला हूँ, वह अुसके पहलेकी है। जेलमें पहुँचते ही अिन्सपेक्टर जनरल ऑफ प्रिज़न्सने आकर बापूसे पूछा कि आपको हर सप्ताह कितने खत लिखने हैं। बापूने जवाब दिया — 'अेक भी नहीं।' अुसने फिर पूछा — 'बाहरसे आपको हर सप्ताह कितने खत मिलें तो आपका काम चलेगा।' बापूने कहा — 'मुझे अेक भी खतकी जरूरत नहीं।' अितने संवादके बाद वह भला आदमी सीधा हो गया। फिर अुसके साथ तय हुआ कि बापू हर सोम या मंगलके दिन चाहे जितने खत लिख सकते हैं।

फिर सवाल आया कि कौन कौनसे रिश्तेदारोंको वे खत लिखेंगे। बापूने कहा — 'सबके सब भारतवासी मेरे कुटुम्बी हैं। कमसे कम आश्रमवासियोंमें तो मैं भेद कर ही नहीं सकता।' तय हुआ कि आश्रमके पते पर बापू चाहे जिस आदमीको पत्र भेज सकते हैं।

यह सब होनेके बाद मैं यरवडा पहुँचा। सरकारने बापूके खर्चेके लिअे मासिक १५० रुपयेकी व्यवस्था की थी, क्योंकि वे स्टेट प्रिज़नर थे। पहले ही दिन सुपरिण्टेण्डेण्ट मेजर मार्टिन फर्नीचर, क्रॉकरी, बरतन सब ले आया। देखते ही बापूने कहा — 'यह सब किसके लिअे लाये हो! अिसे वापिस ले जाओ।' बेचारा मेजर समझ नहीं पाया। अुसने कहा — 'मैंने सरकारको लिखा है कि अितने बड़े मेहमानके लिअे कमसे कम ३०० रुपये मासिक चाहिये। मुझे अुम्मीद है कि अुसकी मंजूरी आ जायगी।' बापूने कहा — 'सो तो ठीक है, लेकिन यह सारा पैसा मेरे देशकी तिजोरीमेंसे ही खर्च होगा न? मुझे अपने देशका बोझ नहीं बढ़ाना है। मैं अुम्मीद करता हूँ कि मेरे भोजनका खर्च ३५ रुपये मासिकसे अधिक नहीं होगा। अगर मेरा स्वास्थ्य अच्छा होता, तो मैं 'सी' क्लासके कैदियोंकी खुराक ही लेकर रहता। लेकिन शरमकी बात है कि मुझे फल लेने पड़ते हैं, बकरीका दूध भी लेना पड़ता है।'

आखिर वे सब चीजें वापस भेज दी गयीं। अस्पतालसे लोहेकी अेक खटिया, अेक गद्दा और 'सी' क्लासके कम्बल मँगवाये गये। खानेपीनेके लिअे बरतन भी 'सी' क्लाससे ही मँगवाये गये थे : तसला, चंबू आदि। सब बरतन जस्ता मिश्रित किसी धातुके* थे। अेक दिन भी साफ करनेमें गफलत हुअी कि दूसरे दिन बिलकुल काले पड़ जाते, और अुनमें रखे हुअे पानी पर तेल-जैसा कुछ आ जाता था। बापूके लिअे शौचका अलग कमरा था, अुसमें कमोड रखा था। और सोते थे बगीचेके बीच खुलेमें। मेरे जानेके बाद मैंने बापूकी खाने-पीनेकी चीजें रखनेके लिअे अेक जालीदार अलमारी बनवायी थी और अुसे रखनेके लिअे अेक टेबल। साथ ही बापूका पेशाबका बरतन रखनेके लिअे अेक अूँचा स्टूल। यही सब हमारा वैभव था।

बापू जब लिखने बैठते, तो आये हुअे खतोंका जितना भाग कोरा रहता अुसे काटकर अुसी पर जवाब लिख भेजते थे। आश्रमसे जिस बड़े लिफाफेमें सबके खत आते, अुसी पर नये कागजका टुकड़ा लगाकर अुसमें अपने खत डालकर वापस भेज देते थे। लिफाफा पुराना हो गया हो तो अुसकी मरम्मत करके अुसे मजबूत करनेका काम मेरा था। अुस पर अेक दिन हमारी बहस भी हुअी। लेकिन हमारा मतभेद कायम रहा और बापूका वक्त व्यर्थ गया। अुसका हम दोनोंको अफसोस रहा।

मेरे स्वभावमें भी कंजूसीकी मात्रा काफी है। जब बाजारसे खजूर और किशमिशके पूड़े आते, तो अुन परके धागे मैं सब सँभालकर रख लेता था। बापूको अेक दिन धागेकी जरूरत पड़ी। मैंने तुरन्त अपने संग्रहसे निकालकर दे दिया। अिस पर बापू बड़े खुश हुअे। पूछने लगे — 'धागा कहाँसे मिला?' मैंने सारा हाल कह सुनाया। तब कहने लगे — 'दीख पड़ता है, देशकी दौलत तुम्हारे हाथमें सुरक्षित रहेगी। तुम्हें डायरेक्टर ऑफ पब्लिक अिन्सट्रक्शन बनाना चाहिये।'

अुन दिनों बापू सूत खूब कातते थे। साप्ताहिक खत लिखना, गीताके श्लोक याद करना और मेरे पास मराठी रीडरें पढ़ना, अितना

* अिस धातुको अंग्रेजीमें शायद Pewter (प्यूटर) कहते हैं।

समय बाद करके, बाकीके सारे वक्त वे सूत ही सूत कातते थे। (आजकल जो यरवड़ा चक्र प्रचलित है, अुसका आविष्कार बापूने अुन्हीं दिनों किया था।) सूत कातते तब जहाँ तक हो सके टूटन न निकले अिसका खयाल अुन्हें बहुत रहता था। फिर भी जितनी टूटन निकलती अुसे अिकट्ठा करके मैंने अुनकी छोटी छोटी डोरियाँ बनाअी थीं, जो अुनके सूतकी लटियाँ बाँधनेके काम आती थीं। तब भी हमारे पास टूटनका ढेर हो गया था। मैंने खादीके टुकड़ेकी छोटी-सी थैली बनाअी और अुसमें ये सब टुकड़े भरकर पिन-कुशन बनाना चाहा। लेकिन खादी तो रंगीन नहीं थी, और सफेद खादी जल्दी मैली हो जाय तो फिर वह बापूके सामने रखी नहीं जा सकती थी। बहुत सोचकर मैंने अेक तरकीब निकाली। हमारे पास आयडीन (Iodine) था। अुसमें थैलीको भिगोकर रंगा, और टूटन भर दी। बढ़िया पिनकुशन बन गया। बापूने खुशीसे अुसे स्वीकार किया और बहुत दिन तक सँभालकर अुसका अुपयोग किया।

मेरी कैदके दिन पूरे होते ही मैं छूट गया। लेकिन वह गद्दी बापूके डेस्क पर बहुत दिनों तक रही। किसी विशेष साधनके बिना बनायी हुअी अैसी हाथकी चीजें बापूको बहुत भाती हैं।

*　　*　　*

जब मैं मगनवाड़ीमें पहले पहल गया, तो वहाँ मैंने बाँसके बहुतसे मोटे मोटे टुकड़े पड़े देखे। अुन टुकड़ोंसे केवल अेक चाकूकी मददसे मैंने बाँसके चम्मच, पेपर कटर, आदि बहुत-सी चीजें बनायीं और बापूको भेंट कीं। जब मैंने देखा कि बापूने वे सब चीजें पंडित जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद जैसोंको अेक अेक भेंट दी और अुनका जिक्र 'हरिजनबंधु' में भी किया, तब तो ५० सालकी अुम्रमें भी मुझे बच्चेका-सा आनन्द हुआ था।

५२

आश्रमके प्रारम्भके दिनोंकी ही बात है। अुन दिनों हमारा सत्याग्रह-आश्रम अहमदाबादके पास कोचरब (गाँव) में था। वहाँ स्वामी सत्यदेव आये। मैं अुन्हें सन् १९११-१२में अल्मोड़ामें मिल चुका था। तब वे अमेरिकासे नये नये आये थे। अुसके बाद ही अुन्होंने देशकी आज़ादीके लिअे संन्यास ग्रहण किया था।

वे आश्रममें आये, अुसके पहले तक वे अनेक ग्रन्थ लिख चुके थे। अुनका मशहूर नाम था सत्यदेव परिव्राजक। आश्रममें आते ही शामको प्रार्थनाके बाद हम अुनसे तुलसीकृत रामायण सुनने लगे। हिन्दीके प्रति अुनका अनुराग देखकर बापूने अुन्हें हिन्दी प्रचारके लिअे मद्रास भेजा। मद्रासके हिन्दी प्रचारकी पहली किताब सत्यदेवजीने लिखी थी।

हमारा आश्रम कोचरबके किरायेके बंगलेको छोड़कर साबरमतीके किनारे अपनी निजी जमीनपर आ गया था। वहाँ पर भी अेक समय सत्यदेवजी आये। देशकी आज़ादीके लिअे बापू काम कर रहे थे,: अुसे देखकर सत्यदेवजी बहुत ही प्रसन्न हुअे। वे आश्रमके मेहमान थे। हम अपनी शक्तिभर अुनकी सेवा करते थे। अुनके खाने पीनेका प्रबन्ध कुछ विशेष करना पड़ता था। अुनको संतुष्ट रखनेमें ही हमारा परम संतोष था।

अेक दिन सत्यदेवजी बापूके पास आकर कहने लगे — 'हम आपके आश्रममें दाखिल होना चाहते हैं। आश्रमवासी बनकर रहेंगे।'

बापूने कहा — 'अच्छी बात है। आश्रम तो आप सरीखोंके लिअे ही है। किन्तु आश्रमवासी होने पर आपको ये गेरुअे कपड़े अुतारने पड़ेंगे।'

सुनते ही सत्यदेवजीको बड़ा आघात पहुँचा। बड़े बिगड़े। लेकिन बापूके सामने अपना दुर्वासाका रूप तो प्रकट नहीं कर सकते थे। कहने लगे — 'यह कैसे हो सकता है ? मैं संन्यासी जो हूँ।' बापूने कहा — 'मैं संन्यास छोड़नेके लिअे नहीं कहता हूँ। मेरी बात समझो।'

फिर बापूने शान्तिसे अुन्हें समझाया — 'हमारे देशमें गेरुअे कपड़ेको देखते ही लोग भक्ति और सेवा करने लगते हैं। अब हमारा काम सेवा कराना नहीं, सेवा करना होना चाहिये। लोगोंकी जैसी सेवा हम करना चाहते हैं, वैसी सेवा अिन कपड़ोंके कारण वे आपसे नहीं लेंगे। अुलटे आपकी ही सेवा करने दौड़ेंगे। तो जो चीज हमारे सेवा-संकल्पमें अन्तराय रूप होती है, अुसे हम क्यों रखें? संन्यास तो मानसिक चीज है, संकल्पकी वस्तु है। बाह्य पोशाकसे अुसका क्या सम्बन्ध है? गेरुआ छोड़नेसे संन्यास थोड़े ही छूटता है। कल अुठकर अगर हम देहातमें गये और वहाँकी टट्टियाँ साफ करने लगे, तो गेरुअे कपड़ेके साथ आपको कोअी वह काम नहीं करने देगा।'

सत्यदेवजीको बात तो समझमें आ गयी, लेकिन जँची नहीं। मेरे पास आकर कहने लगे — 'यह तो मुझसे नहीं होगा। संकल्पपूर्वक जिन कपड़ोंको मैंने ग्रहण किया, अुन्हें नहीं छोड़ सकता।'

५३

होरेस अलेक्जेंडरने अेक जगह लिखा है कि 'शिष्टाचारके नाम पर समाजमें जो असत्य चलता है, अुसका विरोध करनेमें हम क्वेकर * बहुत ही मशहूर हैं। किन्तु गांधीजी तो हमसे भी बहुत आगे बढ़े हुअे हैं।' होरेस अलेक्जेंडरने जो अुदाहरण दिये हैं, वे मुझे नहीं देने हैं। मैं तो स्वयं देखे हुअे कुछ अुदाहरण देता हूँ।

बापूके मनमें बड़े छोटेका भेद है ही नहीं। जहाँ तक अुनका वश चलता है, वे समाजके नियमोंका पालन करते हैं। लेकिन तत्त्वकी बात आते ही अुनका स्वभाव प्रकट होता है।

* क्वेकर पन्थ अिसाअी धर्मकी अेक शाखा है, जिसमें अहिंसाका पालन विशेष होता है। वे लोग युद्धमें शरीक नहीं होते और अुनके पन्थमें कोअी धर्मोपदेशक पादरी भी नहीं होते। सब ध्यानके लिअे अेक जगह अिकट्ठा होते हैं और जिस किसीके मनमें आया, वह अुपदेश वचन बोलने लगता है।

पुरानी बात है। अुन दिनों बापू जब बम्बअी जाते, तब अपने मित्र डॉक्टर प्राणजीवन मेहताके भाअी रेवाशंकर जगजीवनदासके मकान पर ही ठहरते थे। 'महात्मा' बननेके बाद बम्बअीके बड़े बड़े लोग अुन्हें अपने यहाँ ठहरानेमें अपना बड़ा सौभाग्य मानते थे। लेकिन बापू तो रेवाशंकरभाअी जब तक जीवित रहे, अुन्हींके यहाँ ठहरे।

जहाँ बापू ठहरे, वहाँ अुनके मेहमानोंकी तो कमी नहीं। गृहपतिको सबका प्रबन्ध करना पड़ता। अेक दिन हमारे स्वामी आनन्द वहाँ जा पहुँचे। स्वामी आनन्द संन्यासीके वस्त्र नहीं पहनते। धोती, कुरता और गाँधी टोपी, अिसी मामूली पोशाकमें वे हमेशा रहते हैं।

रेवाशंकरभाअीके घरके रसोअियाके साथ स्वामी आनन्दकी कुछ बोलचाल हो गयी। ये रसोअिये कभी कभी बहुत अुद्धत होते हैं। बड़े छोटेका भेद अुनके मनमें बहुत रहता है। अुसने स्वामी आनन्दका कुछ अपमान किया होगा। स्वामीको गुस्सा आ गया। अुन्होंने अुसे अैसी थप्पड़ लगाअी कि वह बैठ ही गया। शिकायत बापू तक गयी। बापूने स्वामीसे कहा — 'अगर भद्र लोगोंमेंसे किसीसे तुम्हारा झगड़ा होता, तो अुसे थप्पड़ नहीं लगाते! वह नौकर ठहरा, अिसलिअे तुमने हाथ अुठाया। अभी जाकर अुससे माफी माँगो।' स्वामी जैसे मान-धनीसे यह कैसे हो सकता था? जब बापूने देखा कि स्वामी माफी माँगनेके लिअे राजी नहीं हैं, तो बोले — 'यदि अन्यायका परिमार्जन नहीं कर सकते, तो मेरा संग तुम्हें छोड़ना होगा।' बिचारे स्वामी क्या करते? सीधे जाकर रसोअियासे माफी माँग आये।

स्वामीने रसोअियाको जो थप्पड़ लगाअी, वह अितने जोरकी थी कि स्वामीकी कलाअीमें मोच आ गयी। पहले वे जब मेरे साथ रहते, बड़े प्रेमसे मेरे कपड़े धो देते थे। लेकिन अब मोचके कारण वह प्रवृत्ति बन्द हो गयी। आज भी अुनकी कलाअीमें पहलेकी शक्ति नहीं है।

५४

१९०९ में हम तिलक पक्षकी ओरसे 'राष्ट्रमत' नामक अेक दैनिक पत्र बम्बअीमें निकालते थे, अुस वक्तसे मेरी और स्वामीकी पहचान है। अुसके बाद हम हिमालयमें साथ साथ घूमे। जब मैं आश्रममें रहने आया और बापूका काम करने लगा, तब भी वे कभी कभी मेरे पास रहनेके लिअे आ जाते। बापूसे मिलना तो स्वाभाविक था ही।

बापूने 'यंग अिंडिया' और 'नवजीवन' नामके दो साप्ताहिक अहमदाबादसे निकालने चाहे। स्वामीने वचन दिया कि वे आकर बापूके नवजीवन प्रेसको छह महीने तक सँभालेंगे और अुसका सारा प्रबन्ध ठीक कर देंगे। अिस ओरसे बापू निश्चिन्त हो गये।

जिस दिन स्वामी अहमदाबाद आनेवाले थे, अुस दिन नहीं आ पाये। ट्रेन आनेका समय हो चुका था। मैंने या किसीने बापूसे कहा कि स्वामी आज ही आनेको थे, लेकिन आये नहीं। बापूका जवाब हाजिर ही था, बोले — 'या तो वे मर गये हैं, या बीमार हो गये हैं। आदमी दिन मुकर्रर करे, आनेका वचन दे और नहीं आये यह हो ही कैसे सकता है!'

बापूका यह कड़ा फैसला सुनकर मैं तो मनमें घबरा गया। मुझे फिक्र हुअी। कहीं स्वामीने आलस्य किया हो, तो बापूके सामने अुनकी प्रतिष्ठा क्या रहेगी? दूसरे दिन स्वामी आये। मैंने अुन्हें देखते ही पूछा — 'कल क्यों नहीं आये?' वे बोले — 'मैं बम्बअीसे ठीक समय पर निकला तो सही, लेकिन ट्रेनमें मुझे बुखार आ गया। अिसलिअे सूरतमें अुतरना पड़ा। बहनके यहाँ गया, कुछ दवा ली, थोड़ा आराम किया, और आज आया हूँ।' मैंने अुन्हें गये दिनके बापूके शब्द कहे। बापूको भी स्वामीकी देरीका कारण बतलाया। बापू बोले — 'मैंने तो मान ही लिया था कि अैसा ही कुछ हुआ होगा। नहीं तो आते कैसे नहीं?'

५५

अुसी दिन स्वामीने नवजीवन प्रेसका चार्ज ले लिया और अैसी लगनसे कार्यमें जुट गये मानो वे भी अुस प्रेसके अेक पुर्जे ही हों। फिर तो बड़े बड़े आन्दोलन शुरू हुअे। हम सब लोग बापूके काममें लीन हो गये। हमें न दिन सूझता था न रात।

अेक दिन मैं प्रेसमें गया। देखता हूँ कि स्वामी अपने दस्तूरके मुताबिक अपना काम कर रहे हैं। दूधका अेक गिलास पासमें रखा है। अच्छे पके केले सामने पड़े हैं। और प्रेसके प्रूफ अेकके बाद अेक हाथमें आ रहे हैं। वे बायें हाथसे केलेका अेक कौर तोड़ते हैं और दाहिने हाथसे प्रूफ सुधारते हैं। अेक प्रूफ हाथसे गया कि झट दूधका गिलास मुँहसे लगा लिया। अेक घूँट पीया और फिर लगे प्रूफ देखने। तीन तीन चार चार दिन तक न वे नहाते थे, न शौच जाते थे। जहाँ काम वहीं सोनेका बिस्तर।

अैसी हालतमें अुत्तर भारतके किसी स्थानसे बापूका अेक कार्ड स्वामीके नामसे आया। अुसमें सिर्फ अिसी मतलबकी कुछ बातें थीं कि 'तुमने नवजीवनका काम सँभाल लिया है, अिसलिअे मैं निश्चिंत हूँ। आशा करता हूँ कि तुम्हारा काम अच्छी तरहसे चल रहा होगा।' स्वामी असमंजसमें पड़ गये। अैसा कार्ड क्यों आया? न मैंने किसी कठिनाअीकी शिकायत की, न मेरे बारेमें किसीने शिकायत की होगी। खूब सोचमें पड़े। फिर याद आया कि 'नवजीवन' छह महीने तक चलानेका जो वायदा किया था, अुसकी मुद्दत आज ही पूरी होती है। स्वामीने कहा — 'बुड्ढा बनिया बड़ा चतुर है। यह तो मेरे वायदेका पुनारम्भ (renewal) है। मैं तो भूल ही गया था कि छह महीनेके ही लिअे यहाँ आया हूँ। लेकिन बुड्ढा भूलनेवाला नहीं। देखो, किस तरह मुझे फिरसे बाँधे ले रहा है। जीवतराम (कृपलानी) सही कहता है कि यह बुड्ढा बड़ा घाघ है।

५६

मुझे बापूने आश्रममें बुलाया था वह आश्रमवासीके तौर पर नहीं, किन्तु राष्ट्रीयशाला चलानेवाले अेक शिक्षकके तौर पर। श्री किशोरलालभाअी मशरूवाला और श्री नरहरिभाअी परीख भी अिसी तरह आये थे। मामा साहब फड़के और श्री विनोबा भावे आश्रमवासी बननेके लिअे ही आश्रममें आये। हम राष्ट्रीय शिक्षकों पर आश्रमका कोअी बन्धन नहीं था। आश्रमके व्रत भी हमारे लिअे अनिवार्य नहीं थे। फिर भी आहिस्ता आहिस्ता, पता नहीं कब और कैसे, हम आश्रमवासी बन गये।

बापू अहमदाबादसे चम्पारन जा रहे थे। मैं अुन्हें बड़ोदा स्टेशन पर मिला। अुन्होंने मुझे पूछा — 'चम्पारन कहाँ है, जानते हो तुम?'

भारतवर्षमें बहुत ही कम लोग अैसे होंगे जो अिस प्रश्नका जवाब दे सकते हैं। लेकिन मैं तो राष्ट्रीय शिक्षक था। यदि मैं जवाब नहीं दे पाता, तो मेरे लिअे बड़ी शरमकी बात होती। खुशकिस्मतीसे मैं जब मुजफ्फरपुर होकर नेपालकी यात्राके लिअे गया था, तो वहाँ मैंने चम्पारनका नाम सुन लिया था। मैंने कहा — 'मैं ठीक ठीक तो नहीं कह सकता, लेकिन अुत्तर बिहारमें कहीं है। चम्पारन कोअी शहर है या जिला यह मैं नहीं कह सकता। अितना जानता हूँ कि नैमिषारण्य या दंडकारण्यके जैसा कोअी जंगल नहीं है।' (वेदारण्यका नाम अुन दिनों मैंने नहीं सुना था।)

बापू खुश हो गये। फिर मैंने कहा — 'आप तो आश्रममें राष्ट्रीयशाला खुलवाना चाहते हैं और स्वयं चम्पारन जा रहे हैं। नींव तो आपको ही डालनी है। हर चीजमें हमें आपकी सलाहकी जरूरत होगी।' बापूने जवाब दिया — 'अभी तो प्रारम्भ ही करना है। हमें व्यापक रूप नहीं देना है। कुछ बिगड़ भी गया तो हमें सुधारते क्या देर लगेगी?' अितने जवाबसे मुझे सन्तोष नहीं हुआ। फिर बापू बोले — 'अभी तो आश्रमके शुरूके ही दिन हैं। मैं बहुत दिन तक दूर नहीं रह सकता हूँ। हर पखवाड़े अेक बार आश्रम आ ही

जाअूँगा ।' यह सुनकर मुझे जितना सन्तोष हुआ अुतना ही आश्चर्य भी। कहाँ अहमदाबाद और कहाँ चम्पारन! मेरे खयालमें भी नहीं था कि ये राजनीतिक नेता छोटेसे आश्रमके लिअे और हमारी छोटीसी शालाके लिअे हर पखवाड़े अितना कष्ट अुठाकर और अितना खर्च करके चम्पारनसे आश्रम आयेंगे। मैं बहुत ही खुश हुआ। मैंने मन ही मन कहा कि जब आश्रम जीवन और शालाकी व्यवस्थाका आपके मनमें अितना महत्व है, तो मुझे कोअी चिंता नहीं। हम तनतोड़ काम करेंगे।

बापूने जो कहा था सो करके भी दिखाया। वे हर पखवाड़े आते थे।

५७

आश्रमकी हमारी शाला शुरू हुअी। बादमें मशरूवाला और परीख आये। बापू तो पखवाड़ेमें अेक बार आते ही थे। वे आते और हमारे बीच बैठकर छोटी मोटी सब बातोंकी चर्चा करते थे।

अेक दिन बापू कहने लगे — 'अेक बात स्पष्ट कर दूँ। जो शाला तुम लोग चला रहे हो, यह मेरी नहीं है, तुम्हारी है। लोग मुझे पहचानते हैं और मुझ पर विश्वास रखते हैं, अिसलिअे शालाके खर्चका भार मैंने अुठाया है। लेकिन अिससे शाला मेरी नहीं होती। जो कुछ भी सलाह मैं यहाँ देता हूँ वह सिर्फ सलाह ही है। अगर तुम्हें वह न जँचे तो अुसे फेंक दो। जो कुछ तुम्हारी समझमें आये, अुसे सही मानकर बिना किसी हिचकिचाहटके अुस पर अमल करते चलो। हाँ, अगर मैं तुम्हारे साथ रहता और तुम जैसा शिक्षक बनकर काम करता, तब तो तुम्हें मैं अपनी रायके पक्षमें लानेके लिअे पूरी कोशिश करता। लेकिन क्योंकि मैं शिक्षकका काम नहीं कर रहा हूँ, मुझे अपने खयाल तुम पर लादनेका कोअी अधिकार नहीं। तुम लोगों पर मेरा विश्वास है। तुम जो भी कुछ करोगे अुससे खराबी नहीं होगी।'

५८

अेक दिन सुलेखनकी चर्चा निकली। बापूको अपने अक्षरोंका बड़ा रंज है। अिसलिअे वे सुलेखन पर विशेष जोर देते हैं।

बापूके अंग्रेजी अक्षर वैसे तो खराब नहीं हैं और जब वे ध्यानपूर्वक कोअी खास पत्र या मजमून लिखते हैं, तब तो अुनके अक्षरोंका व्यक्तित्व अपना असर किये बिना नहीं रहता। गुजराती तो वे दोनों हाथसे लिखते हैं। दाहिने हाथके थक जाने पर बायेंसे काम लेते हैं। 'हिन्द स्वराज्य' अुन्होंने विलायतसे दक्षिण अफ्रीका लौटते समय जहाजमें जहाजके ही कागज पर लिखा था। वह पुस्तक ब्लाक बनवाकर भी छपायी गयी है। अुसमें दोनों हाथोंकी लिखावट पायी जाती है। दोनोंमें भेद काफी है। बायें हाथकी लिखावट विशेष सुवाच्य है।

बापू हमें कहा करते थे कि बच्चोंको अक्षर सिखानेके पहले आलेखन यानी ड्राअिंग सिखाना चाहिये। ड्राअिंग पर हाथ बैठ जाने पर अक्षर खराब होनेका कोअी डर ही नहीं रहता। बापूके अिसी सिद्धान्तको मैंने जो अेक वैज्ञानिक रूप दिया है, अुसे यहाँ थोड़ेमें देता हूँ।

लिपियाँ दो प्रकारकी होती हैं: चित्र लिपि और अक्षर लिपि। चित्र लिपि सीधी होती है। जो आकृति जैसी देखी वैसी ही अुसकी प्रतिकृति अुतार देना यह चित्र लिपिका काम है। कोअी कुर्सी या घड़ा या आम देखकर अुसकी हूबहू आकृति अुतार देना चित्र लिपिका काम हुआ।

अक्षर लिपिका काम जटिल है और है भी भारी। किसी चीजका हम नाम रखते हैं। गलेसे ध्वनि निकालकर नामको व्यक्त करते हैं। कान अुस ध्वनिको ग्रहण करते हैं। और मन अुस चीजकी आकृति समझ लेता है। अिस ध्वनिको किसी आकृतिके द्वारा व्यक्त करना ही अक्षर लिपि है। सर्प विद्या* भी अैसी ही होती है।

* कहा जाता है कि साँपको कान नहीं होते। वह आँखोंसे ही सुनता है। अेक अिन्द्रियके द्वारा दो दो कार्य हम भी करते हैं, जैसे जीभ द्वारा चाखना और बोलना। तो सर्प भी आँखोंसे सुनता हो तो आश्चर्य नहीं। अिसलिअे हमने अक्षर द्वारा आँखोंसे ध्वनिका बोध करानेकी तरकीबको सर्प विद्या कहा है। पढ़ना = आँखोंसे सुनना।

छोटे बच्चोंके लिअे आकृति देखकर आकृति खींचना आसान है। अिसलिअे चित्र लिपि पहले सिखानी चाहिये बादमें अक्षर लिपि।

शिक्षाका प्रारम्भ अक्षरोंके द्वारा न करते हुअे निरीक्षण, परीक्षण, प्रयोग, रचना आदि द्वारा करना चाहिये। और अुन चीजोंको व्यक्त करनेके लिअे चित्र लिपि सिखानी चाहिये। अैसी अेक दो सालकी शिक्षाके बाद अक्षरोंसे ज्ञान कराया जाय, तो शिक्षण यथायोग्य होगा।

चित्र लिपि सीखनेसे हाथकी अुँगलियों पर और कलम पर पूरा काबू आ जाता है, और मनमें जैसी आकृति हो वैसी ही अुतरती है। अुसके बाद अक्षर लिखनेसे अक्षर मोतीके दाने-जैसे सुन्दर आते हैं।

५९

हम दक्षिणकी मुसाफिरीमें थे। स्थान याद नहीं है, शायद बँगलोर होगा। बापू अपने कमरेमें कुछ काम कर रहे थे। दर्शनाभिलाषी लोग आते जाते थे। अितनेमें अेक सज्जन नवपरिणीत दम्पतीको ले आये। दोनोंका पोशाक अमीरी था। नवपरिणीतोंका पोशाक कुछ तो कीमती और तड़क-भड़कवाला होता ही है, अिनका अुससे भी कुछ विशेष था। आगन्तुक सज्जनने कहा — 'महात्माजी, आज ही अिनकी शादी हुअी है। आपके आशीर्वादके लिअे आये हैं।' बापूने अुन दोनोंको अपने सामने बैठाया और कहा — 'अैसे मुफ्त ही आशीर्वाद नहीं मिल जाते। हरिजनोंके लिअे कुछ ले आये हो? शादीमें पुरोहितोंको खूब दक्षिणा दी होगी। हरिजनोंको भी कुछ दिया? हरिजनोंको ठगो यह नहीं चलेगा। लाओ, कुछ दक्षिणा दो तब आशीर्वाद मिलेंगे।'

नवपरिणीत दंपती बोल कैसे सकते हैं! दोनों लानेवाले सज्जनकी ओर देखने लगे।

तब वे सज्जन बोले — 'महात्माजी आपकी बात ठीक है, लेकिन यह नवयुवक अेम० सी० राजाका* लड़का है और यह है अुनकी पुत्रवधू।

---

* अेम० सी० राजा स्वयं हरिजन हैं और दक्षिणके हरिजनोंके प्रधान नेता हैं।

बापू जोरसे हँस पड़े। कहने लगे — 'तब तो तुम मेरे अिस टैक्ससे मुक्त हो।'

मैंने मनमें सोचा, विनोद तो हुआ लेकिन अिस हरिजन नवदम्पतीने देखा होगा कि बापूके मनमें अुनकी जातिके प्रति कितना प्रेम है!

६०

शायद सन् १९३३ की बात है। बापूके हरिजन दौरेके आखिरी दिन थे। बापू सिंध आये। मैं अुसी समय हैदराबाद जेलसे छूटा था। अुनके साथ हो लिया।

देखता हूँ तो बापूके पाँवों पर बहुतसे खँरोच हैं, अुनसे लहू निकल रहा है। जब पूछा कि यह क्या है? तो पता लगा कि महात्माके चरणस्पर्शसे पुनीत होनेवाले भक्तोंकी अुँगलियोंके नख-चिन्ह हैं। मनुष्यकी अिस भक्तिके सम्बन्धमें मुझे विचार आने लगे: मनुष्य अगर और किसीको परेशान करे तो नरकका अधिकारी होता है। पर महात्मा तो ठहरे जनताके अुपभोगकी चीज! अैसा मसीहको भी अिसी तरह क्रूस पर चढ़ाकर ही तो दुनियाने अपना प्रेम दिखाया था! महात्माके चरणोंका अैसा स्पर्श करनेसे स्वर्गका थ्रू टिकट मिलता है।

अुस दिन रातको मैंने गरम पानीसे बापूके पाँव धोये, वैसलीन लगाया और दूसरे दिनसे मैं खुद अुनका स्वयं-नियुक्त चरण-सेवक नहीं किन्तु चरण-रक्षक बना। अिस सेवाके बदले जनताकी ओरसे गालियोंकी पूरी पूरी मजदूरी मिलती थी।

६१

सिंधसे हम लाहौर पहुँचे। वहाँ अनारकलीमें सर्वेण्ट्स ऑफ पीपुल्स सोसायटीके मकानपर ठहरे थे। वहाँके अेक प्रख्यात डॉक्टरको खबर मिली कि महात्माजीका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है और मुसाफिरीमें भी काफी परेशानी हुअी है। वे फौरन ही बापूको देखनेके लिअे आये।

कहने लगे — ‘महात्माजी हम आपकी डॉक्टरी जाँच करना चाहते हैं।’ बापूने कहा — ‘ठीक है, आप कर सकते हैं। लेकिन मैं अैसा बीमार नहीं हूँ।’ डॉक्टरने भक्ति-भीने स्वरमें कहा — ‘लेकिन जब तक आपकी जाँच न कर लें हमें तसल्ली नहीं होगी।’ बापूने कहा — ‘जब तसल्ली ही करना रहा तब तो ठीक है। लेकिन मेरी फीस दिये बगैर मैं किसीको अपनी जाँच करने नहीं देता। अितने मुलाकाती राह देख रहे हैं। आपके लिअे मैं समय मुफ्त क्यों निकालूँ?’

भले डॉक्टरने अपनी जेबसे १६) निकाले और बापूके सामने रख दिये। कहने लगे — ‘यहाँ आनेके पहले विजिट पर गया था। जो मिला सो सब आपके सामने रखा है।’ बापूने प्रसन्नतासे वे रुपये ले लिये और हरिजन फंडमें जमा कर दिये।

लाहौर छोड़ते समय वहाँके पत्रकारोंने समय माँगा। सबके सब अिकट्ठा होकर आये। यहाँपर भी बापूने वही अपनी फीसकी शर्त रख दी। शेरको लहूकी चाट जो लग चुकी थी! पत्रकारोंने अुसी वक्त कुछ चंदा अिकट्ठा करके भेंट किया। बापू भी प्रसन्न हुअे और पत्रकार भी। पत्रकारोंको अखबारका मसाला चाहिये था। अुन्हें यह सारा किस्सा भी मिल गया।

६२

चम्पारनसे अेक दिन बापूका खत आया। अुन दिनों हमारा आश्रम कोचरबमें किरायेके बंगलेमें था। खतमें लिखा था:

‘अब वहाँ बारिश शुरू हुअी होगी। न हुअी हो तो जल्दी होगी। अब हवाकी दिशा बदल जायगी। अिसलिअे आज तक जिस गड्हेमें पाखानेके डब्बे खाली करते थे वहाँ आयन्दा न किये जायँ, नहीं तो अुधरकी हवासे बदबू आनेकी सम्भावना है। अिसलिअे पुराने गड्हे पूर दिये जायँ और अमुक जगह नये गड्हे खोदे जायँ।’

अिस पत्रको देखकर मैं बहुत ही प्रभावित हुआ। बापू चम्पारनमें जाँच पड़तालका काम भी करते हैं और आश्रमकी अिन छोटी

छोटी बातोंकी भी फिकर रखते हैं। मुझे नेपोलियनके वे वचन याद आ गये, जिनका आशय था: युद्धमें वही आदमी सदा विजयी होता है, जो छोटी छोटी तफसीलकी बातोंको सोचकर अुनका अुपाय और सरंजाम कर रखता है। साथ साथ डॉ॰ मार्टीनोका भी अेक वचन याद आया: Triflings make perfection and perfection is not a trifle — छोटी छोटी बातोंकी पूर्तिसे पूर्णता प्राप्त होती है और पूर्णता कोअी छोटी बात नहीं है।

६३

महादेवभाअी और नरहरिभाअीकी घनिष्ठ मित्रता थी। आश्रमके प्रारंभके दिनोंमें अेक बार महादेवभाअीने कहीं लिखा होगा कि बापू अमुक अमुक काममें मुझे कायमके लिअे बाँधना चाहते हैं। नरहरिभाअीने विनोदमें जवाब लिखा: 'बुड्ढा बड़ा चालाक है। अेक बार अगर अुसके चंगुलमें फँसे तो फँसे। फिर छूट नहीं सकते।'

अैसे तो बापू कभी दूसरेके पत्र पढ़ते नहीं हैं। लेकिन अुस दिन सारी डाक बापूके हाथमें गयी। आश्रमसे महादेवके नामका पत्र है, अक्षर नरहरिभाअीके हैं, आश्रमकी खबरें होंगी, यह सोचकर बापूने वह पत्र खोला। पढ़ा तो बड़े दुःखी हुअे। अुन्होंने नरहरिभाअीको पत्र लिखा। अुसमें लिखा था — 'अकस्मात तुम्हारा खत मैंने पढ़ लिया। जिन्दगीके अितने वर्ष व्यतीत किये, अब अिस बुढ़ापेमें अैसा कौनसा मेरा स्वार्थ है, जिसके लिअे तुम लोगोंको मैं धोखा दूँगा।'

यह खत पाकर बेचारे नरहरिभाअी तो काटो तो खून नहीं अैसे हो गये। दौड़े दौड़े मेरे पास आये, सारा किस्सा सुनाया, और बापूका खत मेरे हाथमें रखा। फिर पूछने लगे — 'अब किन शब्दोंमें बापूसे माफी माँगू।' मैंने अुन्हें धीरज दिया। फिर बतलाया — 'यों माफी-वाफीकी बात न करो। जो माँगी कि मर ही गये समझो। अैसे संकट साँडकी तरह सींग पर ही लेने पड़ते हैं। बापूको लिखो कि 'हमारा पत्र

आपने पढ़ा ही क्यों ? अच्छा हुआ कि अुसमें अिससे ज्यादा कुछ नहीं लिखा था। हम युवकोंकी अपनी दुनिया होती है । आपको मालूम हो अिसलिअे आपके बारेमें हम और भी जो जो कहते हैं, वह भी यहाँ लिख देता हूँ । अैसे ही विनोद पर तो हम जीते हैं । और अिसीसे आपके प्रति हम अपनी निष्ठा बढ़ाते हैं ।'

अिस खतका अच्छा असर हुआ । बापू हम लोगोंको अच्छी तरह समझ गये ।

६४

सन् ३०में मैं बापूके साथ रहनेके लिअे सरकारकी ओरसे साबरमती जेलसे यरवड़ा जेल भेजा गया । मैंने देखा कि बापू हमेशाके आहारके फल नहीं ले रहे हैं । सन्तरे और अंगूर अुनके स्वास्थ्यके लिअे आवश्यक थे। वे दोनों नहीं लेते थे । अुनका आहार था — बकरीका दूध, खजूर, कुछ किशमिश और अुबला हुआ शाक । जाते ही मैंने सन्तरोंके लिअे आग्रह किया। मुझे भय था कि अुनका स्वास्थ्य बिगड़ जायगा। लेकिन वे क्यों मानने लगे । अुनकी दलील थी : मैं यहाँ स्टेट प्रिजनर बनकर बैठा हूँ और बाहर लोग कितने कष्ट अुठा रहे हैं, लाठी चार्ज हो रहा है । अैसी हालतमें बाजारसे ये कीमती फल मँगवानेका जी ही नहीं होता ।'

मैं चिन्तामें पड़ गया । अपनी जिद् तो वे छोड़ेंगे नहीं, और फल तो खिलाने चाहिये । क्या किया जाय ! मैंने जेलवालोंसे तरह तरहके शाक मँगवाना शुरू किया और अुबालकर हम दोनों खाने लगे। फिर जेलके बगीचेसे टमाटर मँगवाये। यह तो शाक भी है और फल भी । मुझे सन्तोष था कि अिससे जरूरी विटामिन मिल जायँगे । अेक दिन मुझे जेलसे कच्चा पपीता मिला, वह भी मैंने अुबाल लिया। दूसरे दिन जो पपीता आया वह पका हुआ निकला । मैं बहुत खुश हुआ, आखिर कुछ तो रास्ता मिला । मैंने बापूसे कहा — 'आजका शाक मुझे पकाना नहीं पड़ा । सूर्यनारायणने ही पकाकर भेजा है । वह बाजारसे भी नहीं आया है । जेलके बगीचेकी सस्तीसे सस्ती चीज है ।'

मैंने पका हुआ पपीता अुनके सामने रखा। मेरी दलीलसे बापूको लगा कि मेरी कुछ चालबाजी है। लेकिन वह अकाट्य थी, अिससे बापूने वह पपीता लिया। अब पका हुआ पपीता कभी मिलता और कभी नहीं। फिर भी मुझे अितना संतोष था कि कुछ न कुछ फलका तत्त्व अुनके पेटमें जा रहा है।

मेरी बात तो यहीं पूरी होती है। लेकिन अिसके साथ अेक परिशिष्ट भी देना अुचित है।

समझौतेकी बातचीतके लिअे पंडित मोतीलालजी, जवाहरलालजी, वल्लभभाअी वगैराको यरवड़ा जेलमें लाया गया। अुनके साथ सिंधके जयरामदासजी भी थे। अुन्होंने मुझे बापूके जेल जीवनकी बातें पूछीं। मैंने अूपरका किस्सा भी कहा।

जयरामदासजीने जेलसे छूटने पर अखबारमें लिख दिया कि बापू अपना हमेशाका फलाहार नहीं ले रहे हैं। सरकारकी ओरसे तुरन्त प्रति-वाद निकला कि गांधीजी फल लेते हैं। मुझे बड़ी चिढ़ आयी। लेकिन क्या करता? मैं तो जेलमें ही था!

अैसी थी अुस समयकी हमारी भारत सरकार! किसी तरह शाब्दिक सत्य निबाहकर और सरासर झूठी बातें बनाकर लोगोंको भुलावेमें डालनेमें ही अुसकी सभ्यता थी।

६५

अूपरके किस्सेके समयकी ही यह बात भी है। अुन दिनों जे० सी० कुमारप्पा 'यंग अिण्डिया' का संपादन करते थे। जेलमें हमें 'यंग अिण्डिया' मिलता था। फिर जब सरकारने अुसे जप्त किया और कुमारप्पा साअिक्लोस्टाअिल टाअिपरायटर पर निकालने लगे, तो सरकारकी गफलतसे अुसके भी दो-तीन अंक हमारे पास आ गये। लेकिन बादमें मिलने बन्द हो गये।

अिन्हीं अंकोंमें समाचार था कि चंद लोगों पर गिरफ्तार करके जेलमें बन्द करनेके बाद लाठी चार्ज हुआ।

पढ़ते ही बापू बेचैन हो गये। शामको आँगनमें टहलते टहलते कहने लगे — 'यह तो मुझसे सहा नहीं जाता। मैं तो वाअिसरायको

अेक खत लिखकर अनशन करना चाहता हूँ।' जब मैंने पूछा कि कितने दिनका? तो कहने लगे — 'दिनका सवाल नहीं है। यह सब मुझे बरदाश्त नहीं हो रहा है।'

मैं चिन्तामें पड़ा। मुझे अुनका यह विचार पसंद नहीं आया। मैं बोला — 'बापूजी आप कोअी निश्चय करें, तो अुसके विरुद्ध बोलनेकी न मेरी हिम्मत है न अिच्छा। किन्तु आप कुछ भी निश्चय करें अुसके पहले मेरी दृष्टि आपके सामने रखनेकी मुझे अिजाजत दीजिये। मैं मोहवश होकर आपको अैसे कामसे निवृत्त करनेका प्रयत्न करूँगा, सो तो आप मानेंगे नहीं। मेरा कहना यही है कि रक्तकी दीक्षा मिले बिना देश मजबूत नहीं होगा। सन् '५७ के गदरके बाद राज-नीतिकी बीना पर हमने बहुत कम मार खायी है। सिर फूटते हैं, गोलियाँ चलती हैं, ये बातें करीब करीब हम भूल-से गये हैं। अिसलिअे गोली हौवा बन गयी है। ये लाठियाँ तो राष्ट्रको मजबूत बना रही हैं। हम तो किसीको मारते नहीं। हम लोगोंका खून बहे, क्या यह ठीक नहीं है? लाल रंग देखनेकी आदत तो हो रही है। और भी अेक बात। आज राष्ट्र आपके आधार पर ही सब शक्ति कमा रहा है। आज आपके बलिदानसे अिस वक्त अगर राष्ट्रमें आज़ादीका जोश पागलपन तक बढ़ जाये, तो अुस बलिदानका भी मैं स्वागत करूँगा। लेकिन अिस वक्त राष्ट्र तो अेक खंभेकी द्वारका हो रहा है। मुझे डर है कि अगर अिस वक्त आपकी देह छूट जाय, तो सारा राष्ट्र स्तंभित होकर बैठ जायेगा। अिसलिअे आपको हमें अपना खून बहानेका मौका देना चाहिये।'

मेरे कहनेका क्या असर हुआ सो तो नहीं जानता। लेकिन बापू गम्भीर हो गये, कुछ बोले ही नहीं। अिसके बाद फिर अुन्होंने अनशनकी बात नहीं छेड़ी।

६६

अिन्हीं दिनोंकी बात है। बापूका वजन कुछ कम हो गया था। मैंने कहा — 'बापूजी, आप अपने स्वास्थ्यकी कुछ अुपेक्षा-सी कर रहे हैं। श्रम भी ज्यादा करते हैं।' जवाब मिला — 'अैसा नहीं है, काका। मैं जानता हूँ कि मेरे पर कुछ भी निर्भर नहीं है, सबका भार अुसी पर है। लेकिन लोग मानते हैं कि सब कुछ मुझपर ही निर्भर है। अिसलिअे जिस तरह अेक माता अपने गर्भके बच्चेके खातिर स्वास्थ्यका बहुत खयाल रखती है, अुसी तरह जो स्वराज्य मेरे पेटमें है, अैसा माना जाता है, अुसके लिअे मैं भी अपने स्वास्थ्यके बारेमें सतर्क रहता हूँ।'

६७

कुछ दिन बाद बापूने शामके घूमनेका समय बढ़ा दिया। मैंने कहा — 'क्यों बापूजी, पहले तो आप आधा ही घंटा घूमते थे। अब तो करीब अेक घंटा घूमने लगे। अिधर सुबह भी आप काफी घूम लेते हैं। अिसका स्वास्थ्यपर कहीं बुरा असर तो न हो? बापूने जवाब दिया — 'मुझे अन्दरसे कुछ ज्यादा शक्ति मालूम होने लगी है। अिसलिअे जानबूझकर मैंने घूमनेका समय बढ़ाया है। घूमना ब्रह्मचर्य व्रतके पालनका अेक अंश है।' जब मैंने पूछा कि यह कैसे? तो कहने लगे — 'आदमीको रोज सुबह जो शक्ति दिनभर काम करनेके लिअे दी जाती है, वह अुसे सोनेके समय तक खतम कर डालनी चाहिये। यह है अपरिग्रहका लक्षण। अगर पूरी शक्ति श्रद्धा पूर्वक खर्च नहीं की गयी, तो बची हुअी शक्ति विकारका रूप लेगी। जब हमें रोजके लिअे आवश्यक शक्ति मिल ही जाती है, तो आजकी शक्ति क्यों बचायी जाय? शरीरमें जो कुछ वीर्य पैदा होता है अुसका परिश्रम द्वारा पसीनेमें रूपान्तर कर दिया जाय, तो रातको नींद अच्छी आती है और विकारकी सम्भावना कम रहती है। अिसलिअे अपरिग्रह

और ब्रह्मचर्य दोनोंकी दृष्टिसे पूरा परिश्रम करना ही चाहिये।' अितना कहकर जरा ठहरे और फिर बोले — 'दक्षिण अफ्रीकामें जब ४० मील घूमनेकी शक्ति थी, तो कभी ३९ मील नहीं घूमा। काफी खाता था और खूब परिश्रम करता था।'

अेक दिन आश्रममें कहने लगे — 'अगर केवल अपरिग्रह व्रतका ही खयाल किया जाय, तो अुसका यह अर्थ नहीं कि मनुष्य सादगीसे रहे। हम लोग बड़े परिग्रही हैं। हमारी तुलनामें गोरे लोग ज्यादा अपरिग्रही हैं। पाँचसौ भी कमायें तो महीनेके अंत तक सारी कमाअी खर्च कर डालते हैं। आगे मेरा क्या होगा, मेरे बच्चोंका क्या होगा, अैसी चिन्ता वे नहीं करते। अैसी चिन्ता तो निरी नास्तिकता ही है। हमारे लड़के हमसे कम पुरुषार्थी होंगे, अैसी अश्रद्धा हम क्यों रखें? लड़कोंके लिअे धन संग्रह करके रखना अुन पर अश्रद्धा दिखाना है, अुन्हें बिगाड़ना है। लाहौरके बैरिस्टर संतानम् भी अिसी मतके हैं। अुन्हींसे मैंने अेक दिन यह सुना था कि लड़कोंके लिअे संग्रह छोड़ जाना अुनके प्रति अन्याय करना है।'

६८

आश्रमके प्रारम्भके दिनोंकी बात है। बापूके पास अक्सर अेक ज्योतिषी आया करते थे। अुनका नाम शायद गिरजाशंकर था। अुनसे अेक दिन बापूने कहा — 'जब आप नियमित ही आते हैं, तो आश्रमके लड़कोंको संस्कृत ही क्यों नहीं पढ़ाते?' अिस पर वे संस्कृत पढ़ाने लगे।

वे थे फलित ज्योतिषी। अहमदाबादके अनेक धनी लोगोंका अुन पर विश्वास था। सोमालाल नामके किसी धनीको बापूको कुछ दान देनेकी अिच्छा हुअी। जहाँ तक मुझे स्मरण है, अुन्होंने ज्योतिषीजीके हाथ चालीस हजार रुपये राष्ट्रीय शालाका मकान बँधवानेके लिअे भेजे। अुन दिनों हम वाड़जमें तंबू और टाटोंकी झोपड़ियोंमें रहते थे। मकान बाँधनेका सोचें अुसके पहले ही अहमदाबादमें अिन्फ्लुअेन्जा आ गया और रोज सौ दो सौ आदमी मरने लगे। बड़ा हाहाकार मच गया।

बापूने ज्योतिषीजीसे कहा —‘ अिस साल तो हमें मकान नहीं बँधवाने हैं। न शालाका ही मकान बँधेगा। अिसलिअे सोमालालभाअीके दिये हुअे रुपये वापस ले जाओ।’ ज्योतिषीजीने कहा —‘ अुन्होंने तो पैसे माँगे नहीं हैं।’ अिस पर बापू बोले —‘ तो भी क्या हुआ ? जिस कामके लिअे अुन्होंने पैसे दिये, वह तो अभी हो ही नहीं रहा है। फिर क्यों ये पैसे सँभाले जायँ ? हम किसीके पैसे सँभालकर रखनेके लिअे थोड़े ही यहाँ बैठे हैं ?’ ज्योतिषीजी बोले —‘ अभी न सही, लेकिन किसी भी समय तो छात्रालय बँधेगा न ? तब रुपयोंकी जरूरत होगी।’ बापूने कहा —‘ क्यों नहीं, लेकिन जब बाँधनेका मौका आयेगा, तब ये नहीं तो दूसरे कोअी देने वाले खड़े हो जावेंगे।’ ज्योतिषीजीने जाकर दाताको यह सब किस्सा कह सुनाया। अुसने कहा —‘ जो मैंने दिया है सो दिया है। वापिस नहीं लूँगा।’

६९

मण्डालेसे लौटनेके बाद लोकमान्य तिलकने कांग्रेसमें फिरसे प्रवेश करनेका निश्चय किया। अपने पक्षके लोगोंको समझानेके लिअे अुन्होंने बेलगाँवकी प्रांतीय पोलिटिकल कान्फरेन्समें कोशिश की। मेरे आग्रह और श्री गंगाधरराव देशपांडेके आमंत्रणके कारण बापू भी अुस कान्फरेन्समें आये थे।

हम लोग लोकमान्य तिलकके अनुयायी थे। किन्तु बापूकी तेजस्विता, राष्ट्रभक्ति और चारित्र्य-शुद्धि पर मुग्ध थे। मैं तो हृदयसे अुनका हो गया था और गंगाधररावको अिसी ओर खींचनेका प्रयत्न कर रहा था।

हम चाहते थे कि तिलक और गांधी अगर अेक दूसरेको पहचान सकें तो देशका बहुत बड़ा काम होगा। हमने अैसी व्यवस्था करनी चाही कि लोकमान्य और बापू बिलकुल अेकान्तमें अेक दूसरेसे मिल सकें। लेकिन यह लोकमान्यके मुकाम पर तो नहीं हो सकता था। अिसलिअे गंगाधरराव लोकमान्यको ही बापूके निवास पर ले

आये। अुन्हें वहाँ छोड़नेके बाद श्री गंगाधरराव स्वयं भी वहाँसे चल दिये थे। वहाँ दोनोंमें क्या बातचीत हुअी यह हमें बादमें भी मालूम नहीं हुआ। सिर्फ कमरेके बाहर आकर लोकमान्यने गंगाधररावसे अितना कहा था कि 'यह आदमी हमारा नहीं है। अिसका मार्ग भिन्न है। लेकिन यह पूरा पूरा सच्चा है। अिसके हाथों हिन्दुस्तानका कभी भी अश्रेय नहीं होगा। हमें अिस बातकी सावधानी रखनी चाहिये कि कहीं भी अिसके साथ हमारा विरोध न हो। जहाँ तक हो सके हमें अिसकी मदद ही करनी चाहिये।'

बापूने अुस कान्फरेन्समें अपने भाषणमें अितना ही कहा था कि आप लोग कांग्रेसमें फिरसे प्रवेश करते हैं यह अच्छी ही बात है। किन्तु आपको सिपाहीकी हैसियतसे आना चाहिये न कि वकीलकी।

दूसरे या तीसरे दिन बेलगाँवके अेक नेता श्री बेळवी वकील किसी कार्यवश वहाँके कलेक्टरके पास गये, तो वह पूछने लगा — 'क्यों? आप लोगोंने तो बैरिस्टर गांधीको बुलाया और सुनते हैं अुसने आपको कड़वी कड़वी बातें सुनायीं। आपको तो लगा होगा कि कहाँ अिस आदमीको बुला बैठे।' श्री बेळवीने जवाब दिया — 'आप लोग हम हिन्दुस्तानियोंके स्वभावको नहीं पहचानते। गांधीजी तो हमारे लिअे पूज्य व्यक्ति हैं। अुन्हें हमें नसीहत देनेका अधिकार है। हमने तो आदरभावसे अुनका अुपदेश सुना है। आप देखेंगे कि हम लोग अुनकी कितनी कदर करते हैं।' कलेक्टर चुप हो गया।

७०

ये हमारे दिन थे आश्रममें तंबूमें रहनेके । अहमदाबादके मॉडरेट नेता सर रमणभाअी नीलकंठ बापूसे मिलने आये । वार्तालापमें अुन्होंने बापूसे पूछा — 'महाराष्ट्रके बारेमें आपके क्या खयाल हैं? तिलकके बारेमें क्या हैं?' बापू बोले — 'तिलक महाराज तो बड़े ही कुशल राजनीतिज्ञ हैं । अिस होमरूल लीगके कदमको ही देखिये, तिलकके पासे कितने ठीक ठीक पड़े हैं । और महाराष्ट्र! अुसके बारेमें क्या कहूँ? जहाँ तिलक जैसे लोग हैं, जहाँ राष्ट्रसेवाके लिअे जीवन अर्पण करनेकी अुज्ज्वल परम्परा चली आ रही है, वहाँ क्या कहना? लोग जो काम हाथमें लेते हैं, अुसे पूरा करके ही छोड़ते हैं ।'

किसी औरसे बातचीत करते हुअे बापूने कहा था — 'अगर मेरी अहिंसाकी बात मैं महाराष्ट्रको समझा सका, तो फिर आगेकी कुछ भी चिन्ता करनेकी जरूरत न रहेगी । आरामसे सो जाअूँगा । अितनी कार्यशक्ति है अुस प्रान्तमें । किन्तु क्या किया जाय, महाराष्ट्रमें श्रद्धाकी कमी है!'

७१

हमने आश्रममें शिवाजी अुत्सव मनाया । श्री नारायणरावजी खरेने भजन गाये । श्री विनोबाका और मेरा भाषण हुआ । हमारे भाषणोंमें शिवाजीके बारेमें रामदास, तुकाराम, मोरोपंत आदि संतों और कवियोंने जो कुछ कहा है अुसका जिक्र था । अैतिहासिक विवेचन भी काफी था ।

अन्तमें बापूको दो शब्द बोलनेके लिअे कहा गया । बापूके शब्द थे — 'अितिहास क्या कहता है अिसकी ओर मैं ध्यान नहीं देना चाहता । मेरी तो सन्तोंके वचनों पर श्रद्धा है । यदि सन्त लोग शिवाजीको जनक-जैसा कहते हैं, अुन्हें धर्मावतार मानते हैं, तो मेरे लिअे बस है । अिससे अधिक प्रमाणकी आवश्यकता नहीं ।'

७२

बापू आश्रमकी स्थापना करके जब गुजरातमें बसे, तो अुनका अपने राजनीतिक गुरु गोखलेजीके साहित्यका गुजराती अनुवाद कराना स्वाभाविक ही था। अुनके शिक्षा विषयक लेख और भाषणोंका अेक स्वतंत्र भाग प्रकाशित कराना तय हुआ। अेक मशहूर शिक्षा-शास्त्रीको वह काम सौंपा गया। अनुवाद छप गया और शायद प्रस्तावनाके लिअे छपे हुअे फार्म बापूके पास आये। अुन्होंने सब देख जानेके लिअे महादेवभाअीको सौंप दिये। अुन दिनों महादेवभाअी बापूके नये नये सेक्रेटरी बने थे।

अनुवाद पढ़कर महादेवभाअीको संतोष न हुआ। अुन्होंने बापूसे कह दिया — 'न अनुवाद ठीक है, न भाषा।'

बापू अभिप्राय मात्रसे संतुष्ट नहीं हो जाते, तुरन्त सबूत माँगते हैं। अुनके सामने तो अभियोग करनेवाला भी अभियुक्त ही बन जाता है। महादेवभाअीने कुछ अुदाहरण बतलाये। बापूने कहा — 'ठीक है। तुम्हारी बात समझ गया। अब यह अनुवाद नरहरिको दे दो। अुसकी स्वतंत्र राय मुझे चाहिये।' बेचारे महादेवभाअी खंडित तो हुअे, लेकिन अुन्हें अपने अभिप्राय पर विश्वास था, अिसलिअे विशेष नहीं बोले।

नरहरिभाअीका भी वही अभिप्राय रहा। पर फिर भी बापूको संतोष नहीं हुआ। अुन्होंने कहा — 'अच्छा तो अब काकाकी राय लो।'

अुन दिनों मैं गुजराती ठीक बोल भी नहीं सकता था। साहित्यका परिचय तो नहीं-सा था। फिर भी जब मैंने देखा कि बापू अनुवाद ठीक है या नहीं अिसके लिअे मेरी राय लेना चाहते हैं, तो मैं मूल अंग्रेजी पुस्तक और अनुवाद लेकर बैठा। बापूके सामने जाना है अिस डरसे मैं काफी सावधानीसे कअी पन्ने देख गया, वाक्य वाक्य मिलाये। दुर्दैव बेचारे अनुवादकका कि मेरी भी राय वही रही!

जब तीनोंकी राय अेक रही तब तो बापू गम्भीर हो गये। कहने लगे — 'तो अब दूसरा रास्ता ही नहीं। सारी आवृत्ति जलानी चाहिये। मैं गुजरातीको अैसी भेंट नहीं दे सकता।'

ग्रन्थ काफी बड़ा था । न जाने कितनी हजार प्रतियाँ छपी थीं। बस, बापूका फतवा गया कि सब फार्म जला दिये जायँ! रद्दीमें बेचना भी मना है! पता नहीं बेचारे अनुवादकको अुन्होंने क्या लिखा। बात वहीं खतम हुअी।

अुस अनुवादक पर जो असर हुआ हो सो हुआ हो, लेकिन हम तीनों ठीक ठीक डर गये। आयन्दा जो कुछ भी लिखना हो समझ बूझकर लिखना चाहिये। गुजरातीका और अनुवादका आदर्श कहीं भी नीचे न गिरने पाये। जब 'यंग अिण्डिया' में आनेवाले बापूके लेखोंका गुजराती अनुवादका काम हमारे जिम्मे आता, तो बहुत सावधानीसे करना पड़ता था। हम आपसमें अेक-दूसरेसे सलाह करते, हरअेक शब्द और भाषा-प्रयोगकी छानबीन करते, वाक्य रचनाको अनेक ढंगोंसे करके देखते, फिर भी डर तो रहता ही कि शायद बापूको कोअी शब्द पसन्द न आवे!

* * *

अेक समय बापूके किसी लेखका शीर्षक था — Death Dance. हम लोगोंने अुसका अनुवाद किया था। हमारा अनुवाद भद्दा तो नहीं था, लेकिन बापूको पसन्द नहीं आया। जब हमने पूछा कि आप क्या करते, तो बोले — 'पतंग नृत्य'। बापूका साहित्यिक ज्ञान भले ही हमसे अधिक न हो, लेकिन अुनमें मार्मिकता असाधारण है।

अुन दिनों 'नवजीवन' में स्वामी आनन्द, महादेवभाअी, नरहरिभाअी और मैं अनुवाद कलाके आचार्य माने जाते थे। हमारे साथ श्री जुगतराम दवे, चन्द्रशंकर शुक्ल और दूसरे युवक भी तैयार हुअे थे। नवजीवन प्रेसमें यह परम्परा आज तक अखंड चली आ रही है। अितना ही नहीं, बापूके आग्रहके कारण गुजरात भरमें साहित्यके आदर्शका और अनुवादकी शुद्धिका आग्रह बहुत कुछ बढ़ गया है। अिसके पहले गुजरातीमें अैसे सैकड़ों ग्रन्थ निकल चुके थे, जिनमें सारेके सारे अंग्रेजी, बंगला या मराठीके कठिन शब्द छोड़ दिये गये थे और कुछ वाक्योंका अधूरा ही अर्थ किया गया था।

७३

यरवड़ा जेलमें हम शामको टहल रहे थे। किसी सिलसिलेमें बापू कहने लगे — 'कोअी विषय सामने आते ही आजकल तो मुझे अुस पर लिखनेमें देर नहीं लगती। लेकिन अिसका मतलब यह नहीं कि अिसके लिअे मैंने साधना नहीं की। दक्षिण अफ्रीकामें अेक साथीको कानूनके अिम्तिहानमें बैठना था। अुसके पास न काफी समय था न शक्ति। मैं अुसके लिअे डच लॉके नोट्स निकालता और रोज पैदल अुसके घर जाकर अुसे कानून सिखाता था। अिधर मेरे मुकदमे भी अिस तरह तैयार करके कोर्टमें ले जाता था कि मानो मुझे आज अिम्तिहानमें बैठना हो।'

अिसके पहले मैंने श्री मगनलालभाअीके मुँहसे सुना था कि दक्षिण अफ्रीकामें अेक वक्त अेक मुसलमान बटलरने बापूसे आकर कहा कि यदि मुझे अंग्रेजी आती होती तो अच्छी तनख्वाह मिल जाती। आजकी तनख्वाहमें मेरा पूरा नहीं पड़ता। बस, बापूने तो अुसे अंग्रेजी सिखानेकी तैयारी कर ली। अिस पर वह कहने लगा कि 'आप तो तैयार हो गये, यह आपकी मेहरबानी है। लेकिन मैं नौकरी करूँ या आपके पास अंग्रेजी सीखने आअूँ?' अिसका अिलाज भी बापूने ढूँढ़ निकाला। रोज चार मील पैदल जाकर अुसके घर अुसे अंग्रेजी पढ़ाने लगे।

७४

साल तो ठीक याद नहीं। मैं चिंचवड़से लौटा था। बापूकी आत्मकथा 'नवजीवन'में प्रकरणशः प्रकाशित हो रही थी। अुसके बारेमें चर्चा चली। मैंने कहा — 'आपकी 'आत्मकथा' तो विश्व-साहित्यमें अेक अद्वितीय वस्तु गिनी जायगी। लोग तो अभीसे अुसे यह स्थान देने लगे हैं। लेकिन मुझे अुससे पूरा सन्तोष नहीं हुआ। युवावस्थामें जब मनुष्यको अपने जीवनके आदर्श तय करने पड़ते हैं, अपने लिअे कौनसी लाअिन अनुकूल होगी अिस चिन्तामें वह जब पड़ता है, तब मनका मन्थन महासंग्रामसे कम नहीं होता। अुस कालमें कअी परस्पर विरोधी आदर्श भी अेक-से आकर्षक दिखाअी देते हैं। मैं आपकी 'आत्मकथा'में अैसे मनोमन्थन देखना चाहता था। लेकिन वैसा कुछ नहीं दिख पड़ता। अंग्रेजोंको देशसे भगानेके लिअे आप मांस तक खानेको तैयार हो गये। अिस अेक सिरेकी भूमिकासे अहिंसाकी दूसरे सिरेकी भूमिका पर आप कैसे आये, यह सारी गड़मथन आपने कहीं नहीं लिखी।'

अिस पर बापूने जवाब दिया — 'मैं तो अेकमार्गी आदमी हूँ। तुम कहते हो वैसा मन्थन मेरे मनमें नहीं चलता। कैसी भी परिस्थिति सामने आवे, अुस वक्त मैं अितना ही सोचता हूँ कि अुसमें मेरा कर्तव्य क्या है। वह तय हो जाने पर मैं अुसमें लग जाता हूँ। यह तरीका है मेरा।'

तब फिर मैंने दूसरा प्रश्न पूछा — "'सामान्य लोगोंसे मैं कुछ भिन्न हूँ, मेरे सामने जीवनका अेक मिशन है।' अैसा भान आपको कबसे हुआ? क्या हाअीस्कूलमें पढ़ते थे तब कभी आपको अैसा लगा था कि मैं सब जैसा नहीं हूँ?"

मेरे प्रश्नकी ओर शायद बापूने ध्यान नहीं दिया होगा। अुन्होंने अितना ही कहा — 'बेशक, हाअीस्कूलमें मैं अपने क्लासके लड़कोंका अगुवा बनता था।'

अितनेमें कोअी आ गया और यह महत्वका प्रश्न अैसा ही रह गया।

७५

'आत्मकथा'के बारेमें ही फिर अेक दफे मैंने चर्चा करते हुअे कहा — 'बापूजी, आपने 'आत्मकथा'में बहुत ही कंजूसी की है। कितनी ही अच्छी बातें छोड़ दीं। जहाँ आपने 'आत्मकथा' पूरी की है, अुसके आगे की बातें आप शायद ही लिखेंगे। अगर छूटी हुअी बातें लिख दें, तो 'आत्मकथा' जैसा ही अेक और बड़ा समान्तर ग्रन्थ तैयार हो जाय। बापू कहने लगे — 'अैसा थोड़ा ही है कि सब बातें मैं ही लिखूँ। जो तुम जानते हो तुम लिखो।'

मैंने कहा — 'कहीं कहीं तो अैसा मालूम होता है कि आपने जानबूझकर बातें छोड़ दी हैं। अपने विरुद्ध बातें तो आपने मानो चावसे लिखी हैं। लेकिन औरोंके बारेमें अैसा नहीं किया। जैसे दक्षिण अफ्रीकामें आपके घर पर रहते हुअे, आपकी अनुपस्थितिमें आपका मित्र अेक वेश्या ले आया था, अुसका वर्णन तो ठीक है। लेकिन यह नहीं लिखा कि यह व्यक्ति वही मुसलमान था जिसने हाअीस्कूलके दिनोंमें आपको मांस खानेकी ओर प्रवृत्त किया था और जिसके कारण आपने घरमें चोरी की थी।'

बापूने कहा — 'तुम्हारी बात ठीक है। यह मैंने जानबूझकर ही नहीं लिखा। मुझे तो 'आत्मकथा' लिखनी थी। अुसमें अिस बातका जिक्र जरूरी नहीं था। दूसरी बात यह है कि वह आदमी अभी जीवित है। कुछ लोग अुसका मेरा सम्बन्ध जानते भी हैं। दोनों प्रसंग अेक होनेसे अुसके प्रति अुन लोगोंके मनमें घृणा बढ़ सकती है।'

हर मनुष्यके लिअे बापूके मनमें कितना कारुण्य है, यह देखकर मुझे अेक पुरानी बातका स्मरण हो आया :

बनारस हिन्दू युनिवर्सिटीवाले बापूके भाषणके बाद, अखबारोंमें बापू और श्रीमती बेसंटके बारेमें बड़ी लम्बी-चौड़ी और तीखी चर्चा चल पड़ी थी। अुसी सिलसिलेमें बम्बअीके अिण्डियन सोशल रिफार्मरमें श्री नटराजन्ने बापूके बारेमें लिखा था Every one's honour is safe in his hands — बापूके हाथों किसीकी अिज्जतको खतरा नहीं है।

बापूके चरित्रका यह पहलू नटराजन्‌ने ही अैसे सुन्दर शब्दोंमें व्यक्त किया है।

अिसी प्रसंगके साथ अेक और प्रसंग याद आता है :

अेक प्रमुख मुस्लिम कार्यकर्ताके बारेमें बातें चल रही थीं। मैंने अुसके किसी सार्वजनिक अनुचित व्यवहारका जिक्र किया। बापूने दुःखके साथ कहा — 'तबसे अुसकी मेरे पास पहले जैसी कीमत नहीं रही। लेकिन अुससे क्या? अुसका कुछ नुकसान नहीं होगा। मेरे मनमें किसीकी कीमत बढ़ी तो क्या और घटी तो क्या? मेरा प्रेम थोड़े ही कम होनेवाला है।'

७६

१९२६-२७ की बात है। खादीदौरा पूरा करके बापू अुड़ीसा पहुँचे। वहाँ हम लोग ओटामाटी नामके अेक गाँवमें पहुँचे। बापूका व्याख्यान हुआ। फिर लोग अपनी अपनी भेंट और चन्दा लेकर आये। कोअी कुम्हड़ा लाया, कोअी बिजौरा (बिजपुर, मातुलिंग) लाया, कोअी बैंगन लाया और कोअी जंगलकी भाजी। कुछ गरीबोंने अपने चीथड़ोंसे छोड़ छोड़कर कुछ पैसे भी दिये। सभामें घूम घूमकर मैं पैसे अिकट्ठे कर रहा था। पैसोंके जंगसे मेरे हाथ हरे हरे हो गये थे। मैंने बापूको अपने हाथ दिखाये। मुझसे बोला न गया। दूसरे दिन सुबह बापूके साथ घूमने निकला। रास्ता छोड़कर हम खेतोंमें घूमने चले। तब बापू कहने लगे — 'कितना दारिद्र्य और दैन्य है यहाँ! क्या किया जाय अिन लोगोंके लिअे? जी चाहता है कि मेरी मरणकी घड़ीमें अुड़ीसामें आकर अिन लोगोंके बीच मरूँ। अुस समय जो लोग मुझे यहाँ मिलने आयेंगे, वे तो अिन लोगोंकी करुण दशा देखेंगे। किसी न किसीका तो हृदय पसीजेगा और वह अिनकी सेवाके लिअे आकर यहाँ स्थायी हो जायगा।'

अिस पर मैं क्या कह सकता था! अुनकी अिस पवित्र भावनाका धन्य साक्षी ही हो सका।

७७

अिसी दौरेमें हम चारबटिया पहुँचे। वहाँ भी अैसी अेक सभा हुअी। मैं खयाल करता था कि अीटामाटीसे बढ़कर करुण दृश्य कहीं नहीं होगा। लेकिन चारबटियाका तो अुससे भी बढ़ गया। लोग आये थे तो थोड़े, लेकिन जितने भी थे अुनमेंसे किसीके मुँह पर चैतन्य नहीं दिखाअी देता था। प्रेतके-जैसी शून्यता थी।

यहाँ पर भी बापूने पैसेके लिअे अपील की। लोगोंने भी कुछ न कुछ निकालकर दिया ही। मेरे हाथ वैसे ही हरे हो गये।

अिन लोगोंने रुपये तो कभी देखे ही नहीं थे। ताँबेके पैसे ही अुनका बड़ा धन था। कोअी पैसा हाथमें आ गया, तो अुसे खर्चे करनेकी ये कभी हिम्मत ही नहीं कर पाते थे। बहुत दिन तक बाँधे रखनेसे या जमीनमें गाड़नेके कारण अुन पर जंग चढ़ जाता था।

मैंने बापूसे कहा — 'अिन लोगोंसे अैसे पैसे लेकर क्या होगा?' बापूने कहा — 'यह तो पवित्र दान है। यह हमारे लिअे दीक्षा है। अिसके द्वारा यहाँकी निराश जनताके हृदयमें भी आशाका अंकुर अुगा है। यह पैसा अुस आशाका प्रतीक है। ये मानने लगे हैं कि हमारा भी अुद्धार होगा।'

वह स्थान और दिन याद रहनेका अेक कारण और भी हुआ। रातको हम वहीं सोये। दूसरे दिन सूर्योदय अितना सुन्दर था कि बापूने मुझे देखनेको बुलाया। फिर मुझे पूछने लगे — 'तुम तो (गूजरात) विद्यापीठकी हालत जानते हो। अगर मैं अुसका चार्ज तुम्हें दे दूँ तो लोगे?' मैंने कहा — 'बापूजी, विद्यापीठकी हालत जितनी आप जानते हैं, अुससे अधिक मैं जानता हूँ। सवाल पेचीदा हो गया है। लेकिन कमसे-कम किसी अेक बातमें आपको निश्चिंत करनेके लिअे मैं अुसका चार्ज लेनेको तैयार हूँ।' बापूने कहा — 'किसी डॉक्टरके पास जब कोअी मरीज आता है, तब वह जैसी भी हालतमें हो डॉक्टर अुसकी चिकित्सा करनेसे

अिनकार नहीं कर सकता। डॉक्टर यह तो कह ही नहीं सकता कि जिसके बचनेकी खातरी हो, अुसी रोगीकी मैं चिकित्सा करूँगा।'

मैंने कहा — 'अितनी खराब हालत नहीं है। मैं जरूर विद्यापीठको अच्छे पाये पर ला दूँगा, और धीमे धीमे अुसे ग्रामोन्मुख भी कर दूँगा।'

जब मैंने विद्यापीठका चार्ज लिया, तो अुसके अभ्यास-क्रममें खादी, बढ़अी-काम आदि तो शुरू किये ही; साथ ही 'ग्राम-सेवा-दीक्षित' की नयी अुपाधि स्थापित करके अुसके लिअे भी विद्यार्थी तैयार किये। श्री बबलभाअी मेहता और झवेरभाअी पटेल अुसी ग्रामसेवा मन्दिरके आदि-दीक्षित हैं। सब जानते ही हैं कि अिन दोनोंने ग्रामसेवाका काम कैसा अच्छा चलाया है। बबलभाअीने अपने जो अनुभव 'मारूं गामडुं' (मेरा गाँव) नामक किताबमें दिये हैं, वे किसी अुपन्यास-जैसे रोमांचकारी मालूम होते हैं।

७८

हिन्दुस्तान लौटे बापूको बहुत दिन नहीं हुअे थे। किसी कारण वश अुन्हें बम्बअी जाना पड़ा। वहाँ बुखार आ गया। वे रेवाशंकरभाअीके मणिभुवनमें ठहरे थे। वहाँ महादेवभाअी अुनकी सेवामें थे। अेक दिन बुखार अितना चढ़ा कि सन्निपात हो गया। रातको महादेवभाअीको जगाकर कहने लगे — 'महादेव, ये बंगाली लोग कलकत्तेमें कालीके नामसे कालीघाटके मन्दिरमें पशु-हत्या करते हैं। अिन्हें कैसे समझाया जाय कि यह धर्म नहीं, महा अधर्म है? चल, हम दोनों जाकर सत्याग्रह करें, अुन्हें रोकें। फिर चिढ़े हुअे बंगाली ब्राह्मण वहाँ हम पर टूट पड़ेंगे और हमारे टुकड़े टुकड़े कर डालेंगे। अिस पशु-हत्याको रोकनेमें यदि हमारे प्राण चले जायँ तो क्या बुरा है?'

यह बात मैंने महादेवभाअीके मुँहसे ही सुनी है।

७९

मद्रासका सन् '२६ का कांग्रेस अधिवेशन था। हम श्री श्रीनिवास अय्यंगारजीके मकान पर ठहरे थे। वे हिन्दू-मुस्लिम अेकताके निस्बत अेक मसविदा तैयार करके बापूकी सम्मतिके लिअे लाये। अुन दिनों बापू देशकी राजनीतिसे निवृत्त-से हो गये थे। वे अपनी सारी शक्ति खादी कार्यमें ही लगाते थे। वह मसविदा अुनके हाथमें आया, तो वे कहने लगे — 'किसीके भी प्रयत्नसे और कैसी भी शर्त पर हिन्दू-मुस्लिम समझौता हो जाय तो मंजूर है। मुझे अिसमें क्या दिखाना है?' फिर भी वह मसविदा बापूको दिखाया गया। अुन्होंने सरसरी निगाहसे देखकर कहा — 'ठीक है।'

शामकी प्रार्थना करके बापू जल्दी सो गये। सुबह बहुत जल्दी अुठे। महादेवभाअीको जगाया। मैं भी जग गया। कहने लगे — 'बड़ी गलती हो गयी। कल शामका मसविदा मैंने ध्यानसे नहीं पढ़ा। यों ही कह दिया कि ठीक है। रातको याद आयी कि अुसमें मुसलमानोंको गो-वध करनेकी आम अिजाजत दी गयी है और हमारा गोरक्षाका सवाल यों ही छोड़ दिया गया है। यह मुझसे कैसे बरदाश्त होगा? वे गायका वध करें, तो हम अुन्हें जबरदस्ती तो नहीं रोक सकते। लेकिन अुनकी सेवा करके तो अुन्हें समझा सकते हैं न? मैं तो स्वराज्यके लिअे भी गोरक्षाका आदर्श नहीं छोड़ सकता। अुन लोगोंको अभी जाकर कह आओ कि वह समझौता मुझे मान्य नहीं है। नतीजा चाहे जो कुछ भी हो, किन्तु मैं बेचारी गायोंको अिस तरह छोड़ नहीं सकता।'

सामान्य तौर पर कैसी भी हालतमें बापूकी आवाजमें क्षोभ नहीं रहता, वे शान्तिसे ही बोलते हैं। लेकिन अूपरकी बातें बोलते समय वे अुत्तेजित-से मालूम होते थे। मैंने मनमें कहा — 'अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयं। यद्राज्यलाभलोभेन गां परित्यक्तुमुद्यताः॥' बापूकी हालत अैसी ही थी।

८०

मिसेस् अेनी बेसेन्टने होमरूल लीगकी स्थापना की और हिन्दुस्तानमें राजनीतिक आन्दोलन जोरोंसे चलाया। सरकारने अुन्हें नजरकैद कर दिया। अब अुसके लिअे क्या किया जाय, यह सोचनेके लिअे श्री शंकरलाल बेंकर बापूके पास आये। बापूने अुन्हें सत्याग्रहकी सिफारिश करनेवाला पत्र लिखा। वह पत्र श्री शंकरलालभाअीने प्रकाशित कर दिया और सत्याग्रहकी तैयारी की। यह सब देखकर सरकारने मिसेस् अेनी बेसेन्टको मुक्त कर दिया।

फिर तो आन्दोलनका रूप ही बदल गया। असहयोगके दिन आ गये। मिसेस् अेनी बेसेन्टने 'न्यू अिण्डिया' नामक अेक अंग्रेजी दैनिक पत्र चलाया। अुसमें बापूके खिलाफ रोज कुछ न कुछ लिखा जाने लगा। अेक दिन अुसमें बहुत ही खराब लेख आया। मैंने बापूसे पूछा — 'कलके 'न्यू अिण्डिया'का लेख आपने पढ़ा है?' बापू कहने लगे — 'मैंने 'न्यू अिण्डिया' पढ़ना कबसे छोड़ दिया है। जब तक कोअी खास दलील वाले लेख आते थे, मैं अुसे पढ़ता था। लेकिन जब देखा कि अुसमें मुझपर व्यक्तिगत टीका ही होने लगी है, तो मैंने पढ़ना छोड़ दिया। व्यक्तिगत टीका सुननेसे अुसका मन पर कुछ न कुछ असर होनेकी सम्भावना रहती है। पढ़ा ही नहीं, तो मनका सद्‌भाव जैसाका तैसा रहता है। अब यदि मैं मिसेस् बेसेन्टसे मिला तो मेरे मनमें अुनके प्रति जो आदरभाव है, अुसमें कमी नहीं होगी।

८१

आश्रमकी स्थापनाके दिन थे। हम कोचरबके बंगलेमें रहते थे। अपनी संस्थाके लिअे धन अिकट्ठा करनेके लिअे प्रोफेसर कर्वे अहमदाबाद आये थे। वे बापूसे मिलने आश्रममें आये।

बापूने सब आश्रमवासियोंको अिकट्ठा किया और सबको अुन्हें साष्टांग नमस्कार करनेके लिअे कहा। फिर समझाने लगे — 'गोखलेजी दक्षिण

अफ्रीकामें आये थे, तब मैंने अुनसे पूछा था कि आपके प्रान्तमें सत्यनिष्ठ लोग कौन कौन हैं? अुन्होंने कहा था कि मैं अपना नाम तो दे ही नहीं सकता। मैं कोशिश तो करता हूँ कि सत्य पथ पर ही चलूँ, लेकिन राजनीतिके मामलेमें कभी कभी असत्य मुँहसे निकल ही जाता है। मैं जिनको जानता हूँ, अुनमें तीन आदमी पूरे पूरे सत्यवादी हैं: अेक प्रोफेसर कर्वे, दूसरे शंकरराव लवाटे (ये मद्य-निषेधका कार्य करते थे।) और तीसरे . . .।' आगे बोले — 'सत्यनिष्ठ लोग हमारे लिअे तीर्थ-जैसे हैं। सत्याग्रह आश्रमकी स्थापना सत्यकी अुपासनाके लिअे ही है। अैसे आश्रममें कोअी सत्यनिष्ठ मूर्ति पधारे, तो हमारे लिअे वह मंगल दिन है।'

बेचारे कर्वे तो गद्‌गद हो गये। कुछ जवाब ही नहीं दे सके। कहने लगे — 'गांधीजी, आपने मुझे अच्छा झेंपाया। आपके सामने मैं कौन चीज हूँ!'

८२

सन् '३०में मैं यरवड़ा जेलमें बापूके साथ रहनेके लिअे भेजा गया। मैं अपने साथ काफी पूनियाँ ले गया था। वहाँ मुझे पाँच महीनेसे ज्यादा नहीं रहना था। मेरी पूनियाँ अितनी थीं कि पाँच महीने मुझे बाहरसे मँगवानेकी जरूरत नहीं रहती। लेकिन हुआ यह कि कुछ ही दिनोंमें सरकारने श्री वल्लभभाअीको भी यरवड़ा जेलमें लाकर रख दिया। अुनके और हमारे बीच थी तो सिर्फ अेक ही दीवाल; लेकिन हम मिल नहीं सकते थे। बापूको अिसका बहुत ही बुरा लगता। कहते — 'यह सरकार कैसी तंग कर रही है! वल्लभभाअीको साबरमतीसे यहाँ ले आयी। हम अुनकी आवाज भी कभी कभी सुन सकते हैं, किन्तु मिल नहीं सकते। सरकारको अिसमें क्या मजा आता होगा?' जो लोग बापूको दूरसे ही देखते हैं, वे अुनकी धीरोदात्तता ही देख सकते हैं। अुनका प्रेम कितना अुत्कट है और अुसपर आघात लगानेसे वे कितने घायल होते हैं, यह तो बाहरके लोग नहीं जान सकते। बापू जब

आँगनमें टहलते, तो अुनका लक्ष्य बार बार दीवालके अुस पार ही जाता था ।

अेक दिन मेजर मार्टिन (सुपरिण्टेण्डेण्ट) वल्लभभाअीकी चिट्ठी ले आया । अुसमें लिखा था — 'मेरी सब पूनियाँ खतम हो गयी हैं । आपके पास कुछ हों तो भेज दीजिये ।' वल्लभभाअी सूत खूब कातते थे । जब वक्त खाली मिलता, तब या तो अपने कमरेमें शेरकी तरह टहलते रहते या फिर सूत कातते । अुनकी माँको भी कातनेकी खूब आदत थी । वे अंधी हुअीं तो भी कातना नहीं छोड़ा था । घरके लोगोंको अपनी अपनी पूनियाँ छिपाकर रखनी पड़ती थीं । कहीं मिल गयीं तो लेकर कात ही डालती थीं । अैसी माँके बेटे जो ठहरे!

बापूने मुझे पूछा — 'काका तुम्हारे पास पूनियाँ हैं?' मैंने कहा — 'चाहे जितनी । लेकिन मुझे धुनकना नहीं आता । यह दे दूँ तो मैं क्या करूँ?' अिसपर बापूने कहा — 'मैं तुम्हें सिखाअूँगा, नहीं तो मैं पूनियाँ बना दूँगा ।' मैंने सीखना ही पसन्द किया, लेकिन मेरे मनमें डर तो था ही । सब पूनियाँ वल्लभभाअीको भेज दी गयीं ।

अब बापूने पड़ोसके कमरेमें सब सरंजाम सजाया । मुझे धुनकनेकी कला सिखायी । मैं थोड़े ही दिनोंमें तैयार हो गया ।

लेकिन अितनेमें बारिश आ गयी । हवाकी नमीके कारण ताँत ढीली हो जाती थी । हमने अिलाज सोचा : धूप निकले तो पींजनको और रूअीको भी धूपमें रखा जाय । मैंने वह किया भी । लेकिन बारिश तो खूब होती थी । हमारे लिअे रोज धूप नहीं निकलती थी । फिर हमें सूझा कि हमारे आँगनमें पावरोटीकी भट्ठी है, जो अेंग्लो अिण्डियन कैदी लड़के चैलाते हैं । मैं शामको अपना पींजन और रूअी भट्ठीके पास रख आने लगा । अिससे ताँत तो सूख कर टनक बन जाती, लेकिन अुसके अुठे हुअे तन्तुओंको कैसे बैठाया जाय । फिर अुपाय सूझा कि अुस पर कड़ुअे नीमके पत्ते घिसे जायें ।

अेक दिन बापूने देखा कि मैं चार पाँच पत्तोंके लिअे पूरी टहनी तोड़ लाता हूँ, तो कहने लगे — 'यह तो हिंसा है । और लोग न समझें लेकिन तुम तो आसानीसे समझ सकते हो । ये चार पत्ते भी हमें पेड़से क्षमा माँगकर ही तोड़ने चाहियें । तुम तो पूरी टहनी तोड़ लाते हो!'

दूसरे दिनसे मैंने सुधार किया। मैं अूँचा तो हूँ ही। अब झाड़ परसे चार पाँच पत्ते ही तोड़ने लगा। मैंने अेक बात और भी की। जिस दिन भट्ठीका लाभ नहीं मिलता, अुस दिन ताँतको नमीके असरसे बचानेके लिअे अुसपर मोमबत्ती घिसने लगा। अुसका असर अच्छा हुआ और बापू प्रसन्न हो गये।

अितनेमें बाहरसे दातुन मिलना बन्द हो गया। मैंने कहा — 'बापूजी यहाँ तो नीमके पेड़ बहुत हैं। मैं आपको रोज अच्छी ताजी दातुन दिया करूँगा।' बापूने मंजूर किया। दूसरे दिन दातुन लाया और अुसका अेक छोर कूटकर अच्छी कूची बनायी। अुसे अिस्तेमाल कर लेनेके बाद बापू कहने लगे — 'अब अिसका कूचीवाला भाग काट डालो और फिर अुसी दातुनकी नयी कूची बनाओ।' मैंने कहा — 'यहाँ तो रोज ताजी दातुन मिल सकेगी।' बापूने कहा — 'सो तो मैं जानता हूँ। लेकिन हमें अुसका अधिकार नहीं है। जब तक अेक दातुन बिलकुल सूख न जाय अुसे हम फेंक कैसे सकते हैं!' दूसरे दिनसे वैसा ही करने लगा। कभी कभी तो कूची अच्छी नहीं बनती थी। बापूके थोड़ेसे दाँतों और मसूड़ोंको जरा भी तकलीफ हो, यह मैं सह तो नहीं सकता था। लेकिन जब तक दातुन बिलकुल छोटी न हो जाती या सूख न जाती, तब तक नयी काटनेकी मुझे अिजाजत नहीं थी।

अिस तरह बापू जेलमें आदर्श कैदीकी तरह ही नहीं रहते थे, बल्कि आदर्श अहिंसा-व्रत-धारी भी थे।

•

८३

१९२१के दिन थे। बेजवाड़ामें राष्ट्रीय महासमितिका अधिवेशन हो रहा था। कांग्रेसके विराट अधिवेशनसे अुसकी शान-शौकत कम नहीं थी। तिलक स्वराज्य-फंडके लिअे अेक करोड़ रुपया अिकट्ठा करना, अेक करोड़ कांग्रेसके सभासद बनाना और बीस लाख चरखे चालू करना यह कार्यक्रम वहाँ तय हुआ था।

असके बाद अेक बड़ी सभा हुअी। मिट्टीका अेक अूँचा टीला बनाकर असपर नेताओंको बैठाया गया। चारों ओर लोक समुदाय समुद्र-जैसा अुमड़ रहा था। अुन दिनों लाअुड स्पीकर नहीं था। आवाज दूर तक पहुँच नहीं पाती थी। लोग तो नयी आशासे पागल बन गये थे। अुन्हें केवल गांधीजीका दर्शन करना था। सभाके प्रारम्भमें ही लोगोंके बीच अेक गाय घुस आयी। सभामें गड़बड़ी मच गयी। बापू अितना ही कह पाये कि 'आप यहाँ मुझे देखने नहीं आये हैं। स्वराज्यकी आवाज सुनने आये हैं।' लेकिन अुस हो-हल्लेमें कुछ भी सुनायी नहीं देता था। बापू कुर्सीपर खड़े हुअे। यह देखकर पागल लोग और भी पागल हो गये। वे टीलेकी ओर धँसे। वहाँ अैसा अिन्तजाम नहीं था, जो लोगोंको काबूमें रख सके। मुझे तो बापूकी जानकी भी चिन्ता होने लगी। शत्रुओंसे बचा जा सकता है, लेकिन अन्धे भक्तोंसे कैसे बचा जाय! धँसनेवाले लोग टीलेपरके मंडपके खम्भे पकड़कर अूपर चढ़नेकी कोशिश करने लगे। यह तो साफ था कि कहीं अेक भी खम्भा फिसल जाय, तो सारा मंडप नेताओंके सिरपर आ गिरेगा।

बापू परिस्थिति समझ गये। तुरन्त ही वे कुर्सीपर खड़े हो गये। अेक क्षणके अंदर अुन्होंने चारों ओर देखा और दो तीन कुर्सियोंपरसे कूदकर जिस तरफ सभाका विस्तार कम था अुस तरफ भीड़में कूद पड़े। और लोगोंको जोरसे हटाते हटाते तीर-से भीड़ चीरते हुअे बाहर निकल गये। किसीको पता तक न चल पाया।

मैंने जब कुर्सी पर खड़े होकर चारों ओर ध्यानसे देखा कि बापू कहीं नहीं हैं, तो मैंने भी सभास्थान छोड़नेकी तैयारी की। लोगोंने जब देखा कि गांधीजी सभामें नहीं हैं, तो भीड़को छँटनेमें देर न लगी। मैं बड़ी कठिनाअीसे घर पहुँचा। देखता हूँ तो बापू अपने कमरेमें बैठकर आरामसे खत लिख रहे हैं, मानो वे सभामें गये ही न हों। जब मैंने बापूसे पूछा कि आप कैसे आये? तो वे कहने लगे — 'भीड़के बाहर आते ही देखा कि किसीकी गाड़ी जा रही है। मैंने अुसे रोक लिया। अुसीमें बैठकर अिस मुकामपर आ पहुँचा।'

८४

गूजरात विद्यापीठके नियामक मंडलकी बैठक थी। बापूको असमें अपस्थित होना था। अनके लिअे सवारी शायद समयपर नहीं पहुँच सकी थी। बापू समय पालनके अत्यन्त आग्रही हैं। सवारी न पाकर आश्रमसे पैदल चल पड़े। लेकिन समयपर कैसे पहुँच सकते थे? समय करीब करीब होने आया था और आश्रमसे विद्यापीठ काफी दूर था। बीचका रास्ता निर्जन होनेसे कोअी सवारी मिलना भी सम्भव न था।

कुछ दूर चलनेके बाद बापूने रास्तेमें देखा कि अेक खादीधारी सायकल पर जा रहा है। बापूने असे रोक लिया। कहा — 'सायकल दे दो, मुझे विद्यापीठ जाना है।' असने चुपचाप सायकल दे दी।

बापू शायद कभी दक्षिण अफ्रीकामें सायकलपर चढ़े होंगे। हिन्दुस्तानमें कभी मौका ही नहीं आया था। बस, सायकलपर सवार हुअे और विद्यापीठ आ पहुँचे। बापूको समयपर आते देखकर तो आश्चर्य हुआ ही। किन्तु अेक छोटी-सी धोती पहने, नंगे बदन, सायकलपर सवार बापूका जो दृश्य देखा, वह अपनी जिन्दगीमें फिर कभी नहीं दिखायी देगा!

८५

सन् '२४के प्रारम्भमें बापू यरवड़ा जेलसे बीमारीके कारण जल्दी छूटे थे। मैं भी अपनी अेक सालकी सजा पूरी करके अन्हें मिलनेके लिअे पूना गया।

हमने छोटे बच्चोंके लिअे गुजरातीकी अेक बालपोथी बनायी थी। असका नाम रखा था 'चालनगाड़ी'। असकी यह खूबी थी कि वर्णमालाके दो-चार अक्षर सीखते ही बच्चे शब्द भी पढ़ने लगें। हर पृष्ठपर बेलबूटे थे। सारी किताब रंग-बिरंगे आर्ट पेपर पर अनेक रंगोंमें छापी गयी थी। सजानेमें हमने कुछ कसर नहीं रखी थी। बच्चोंको अक्षरके परिचयके

साथ सुरुचिकी भी दीक्षा मिले यह अुद्देश्य था। अेक अेक प्रति पाँच-पाँच आनेमें बिकती थी। अुसका गुजरातने खूब स्वागत किया था। चूँकि अुसकी सारी कल्पना और अुसके हर पृष्ठकी निगरानी मेरी थी, अिसलिअे मुझे अुसपर कुछ अभिमान भी था।

अेक दिन मैंने बापूसे पूछा — 'आपने 'चालनगाड़ी' देखी ही होगी।' अुन्होंने कहा — 'हाँ, देखी तो है। है भी सुन्दर, लेकिन किसके लिअे बनायी तुमने वह? राष्ट्रीय शिक्षाके आचार्य हो न? भूखे रहनेवाले करोड़ों लोगोंके बच्चोंको विद्यादान देनेका भार तुमपर है। आजकी बालपोथियाँ अगर अेक आनेमें मिलती हों, तो तुम्हारी बालपोथी दो पैसेमें मिलनी चाहिये। मैं तो कहूँगा कि अेक पैसेमें ही क्यों न मिले। तुम्हारी चीज पाँच आनेमें भी सस्ती है, यह तो मैं देख रहा हूँ। लेकिन गरीब पाँच आने लाये कहाँसे?'

मैं अपने अन्धेपनपर लज्जित हो गया। हालाँकि अुस चीजका मोह तो था ही। अहमदाबाद जाकर रंगबिरंगे कागज और रंग-बिरंगी स्याहीका आग्रह छोड़कर अुसका अेक नया संस्करण निकाला और अुसे पाँच पैसेमें बेचना शुरू किया। लेकिन फिर भी अुसे लेकर बापूके पास जानेकी हिम्मत नहीं हुआी।

बापूके अुस अुलाहनेका मुझपर अितना असर हुआ कि बुद्ध भगवानका जीवन चरित्र, जो विद्यापीठकी ओरसे ढाअी रुपयेमें बिकता था, आगे जब नया संस्करण निकाला गया तो कागज और छपाअीका जरा भी फर्क किये बगैर हमने आठ आनेमें बेचा। फलतः वह चरित्र गुजरातमें अितना बिका कि नवजीवन प्रकाशन मन्दिरको कुछ भी घाटा नहीं आया।

८६

बापू जिससे बातचीत करते हैं असके रहन-सहन, असके धर्म, असकी रुचि-अरुचि, सबका बड़ी सावधानीसे खयाल रखते हैं।

अेक दिन अेक औसाओी भाओीका पत्र आया। असमें अन्होंने स्वदेशीके बारेमें सवाल पूछा था।

बापूने जवाबमें लिखा — 'स्वदेशी धर्म बाअिबलके अेक अपदेशका ही अमली स्वरूप है। औसा मसीहने कहा है न कि 'जैसा प्यार अपनेपर रहता है, वैसा ही प्यार अपने पड़ोसीपर रखो'? जब कोओी आदमी अपने पड़ोसके दुकानदारको छोड़कर किसी दूरके दुकानदारसे चीज खरीदता है, तो वह अपना पड़ोसी-धर्म भूलकर स्वार्थके वश ही अितनी दूर जाता है। असके पड़ोसी दुकानदारने जो दुकान खोली सो अपने अिर्दगिर्दके ग्राहकोंके आधारपर ही खोली है न? स्वदेशी धर्म कहता है कि पड़ोसीका तुमपर जो अधिकार है, असका तुम द्रोह मत करो।'

बापूका यह खत पढ़नेके बाद ही 'अपने पड़ोसीसे प्यार करो' का पूरा अर्थ मैं समझ पाया।

८७

अैसा ही अेक दूसरा अदाहरण है। मीराबहन (Miss Slade)के लिअे बापू 'आश्रम भजनावलि'का अंग्रेजी अनुवाद कर रहे थे। प्रार्थनाके बाद रोज थोड़ा थोड़ा समय देकर अन्होंने 'आश्रम भजनावलि'का पूरा अनुवाद कर डाला था। असमें अेक श्लोक है :

"जय जय करुणाब्धे श्री महादेव शंभो।"

मैंने संस्कृतके अंग्रेजी अनुवाद भी देखे हैं, किये भी हैं। 'जय जय'का सीधा अनुवाद तो है Victory Victory. लेकिन बापूने किया Thy will be done! जब मैंने पूछा तो कहने लगे — 'भगवानका विजय तो विश्वमें है ही। हम प्रार्थना करते हैं कि हमारे हृदयमें काम, क्रोध वगैराको विजय मिल रहा है वह न मिले, वे हट जायँ। यानी जैसी

अीश्वरकी अिच्छा है, वैसे ही कर्म हम करते जायँ। अीसाअियोंके लिअे Thy kingdom come या Thy will be done यही अनुवाद हो सकता है। प्रार्थना तो हम अपने हृदयमें 'भगवानका विजय हो' अिसीलिअे करते हैं न?'

८८

यरवड़ा जेलका जेलर मि० क्विन अेक आयरिशमैन था। रोज शामको हमारी खबर पूछने आया करता। आकर बैठता तो कुछ न कुछ बातें होतीं ही। अेक दिन बापूसे कहने लगा — 'मैं गुजराती सीखना चाहता हूँ।' बापूने कहा — 'अच्छी बात है।' वह रोज शामको बापूसे गुजराती बालपोथी पुस्तक पढ़ने लगा और बापू भी अुसे समय देकर प्रेमसे पढ़ाने लगे।

अेक दिन अुसके जानेके बाद बापू मुझे कहने लगे — 'मैं जानता हूँ कि मेरी अपेक्षा तुम अिसे अच्छी तरह पढ़ा सकोगे। और मेरा समय भी बच जायगा। लेकिन अिसकी हवस मुझसे ही पढ़नेकी है।'

बादमें वह सुबह आने लगा। अेक दिन वह नहीं आया। हमें कुछ आश्चर्य हुआ। मैंने तलाश की। कारण मालूम हुआ। दूसरे दिन भोजनके बाद मैंने बापूको कहा — 'मि० क्विन कल क्यों नहीं आया, अुसका कारण मैं समझ गया। कल सुबह यहाँ अेक फाँसी थी। अुसे वहाँ जाना था। अिसलिअे यहाँ नहीं आया।'

मेरा वाक्य सुनते ही बापू अस्वस्थ हो गये। अुनका चेहरा बदल गया। कहने लगे — 'अैसा लगता है कि खाया अन्न अभी बाहर निकल आवेगा।'

बापू जानते थे कि जहाँ हम रहते थे, वहाँसे फाँसीकी जगह नजदीक ही थी। अपने नजदीक ही कल अेक आदमीको फाँसी दी गयी, यह सुनते ही अुनके मनमें अुसका चित्र खड़ा हो गया और वे अैसे अस्वस्थ हुअे कि मैं घबरा गया!

*　　*　　*

अेक दिन मि० क्विनने बापूसे कहा — 'गुजराती लिखावट मैं बारबार पढ़ सकूँ, अिसलिअे आप कोअी वाक्य मुझे अेक कागजपर लिख दीजिये।' बापूने लिख दिया — 'कैदियों पर प्रेम करो और अगर किसी कारण मनमें गुस्सा आ जाय, तो गम खा कर शान्त हो जाओ।'

यही मि० क्विन बादमें जब विसापुर जेलका सुपरिण्टेण्डेण्ट हुआ और गुजरातके राजनीतिक कैदी वहाँ गये, तब किसी प्रसंगपर अुसको बहुत गुस्सा आ गया और राजनीतिक कैदी भी अुससे अितने चिढ़े कि शायद गोली भी चलानी पड़ती। लेकिन मि० क्विनकी जेबमें बापूका लिखा वह गुजराती वाक्यवाला कागज था। अुसने अुसे बारबार पढ़ा। शान्त हुआ। अुसने सत्याग्रहियोंसे माफी तक माँगी थी।

अिसी तरह, मुझे याद आता है, अेक समय जेलके अेक अॅंग्लो अिण्डियन नौकरने बापूसे autograph (स्वाक्षरी) माँगी। बापूने लिख दिया — 'It does not cost to be kind.' अुस जवानने मुझे अनेक बार कहा है कि वह वाक्य पढ़नेके बाद अुसका स्वभाव ही बदल गया है।

८९

मुझे क्षय रोग हुआ तो मैं स्वास्थ्य लाभके लिअे पूनाके पास सिंहगढ़पर जाकर रहा था। स्वास्थ्य सुधरनेपर आश्रममें आकर रहने लगा। डॉक्टरकी सलाह थी कि कुछ महीने मैं आराम ही करूँ।

आश्रममें पहुँचे मुझे कुछ ही देर हुअी थी कि अेक लड़की थालीमें अच्छे अच्छे फूल लेकर आयी। कहने लगी — 'ये बापूने आपके लिअे भेजे हैं।' मेरी आँखोंमें आँसू आ गये। वह आगे बोली — 'बापूने हमें कहा है कि काकाके पास रोज अिसी तरह फूल पहुँचाती रहो। काकाको फूलोंसे बड़ा प्रेम है।'

बापू भी रोज कभी न कभी वक्त निकाल कर मेरे पास आ ही जाते थे।

अिसी तरह और अेक समय आश्रमके लड़केने आकर बापूसे कहा — 'बापूजी, प्रोफेसर आव्या छे।' (आश्रममें श्री जीवतराम कृपलानीको प्रोफेसर कहते थे।) सुनते ही बापूने देवदाससे कहा — 'देवा, जाकर बा से पूछो कि दही है या नहीं? प्रोफेसरको दही तो जरूर चाहिये। न हो तो कहींसे नीबू ले आओ, और कहीं नहीं तो काकाके घर जरूर मिलेगा।'

बापूका प्रेम सेवामय है। हर मनुष्यका सुख-दुःख पूरा पूरा समझ लेनेकी अुनकी स्वाभाविक वृत्ति है।

अेक दिन यरवडा जेलमें मैंने बापूको कुम्हड़ेकी शाक बनाकर दी और मैंने नहीं ली। कुछ खानेके बाद कहने लगे — 'मुझे मालूम है कि तुम्हें कुम्हड़ेसे अरुचि है। लेकिन आजका कुम्हड़ा कुछ और है। थोड़ा खाकर तो देखो।' अस्वाद व्रतकी दीक्षा देनेवाले बापूकी ओरसे कोअी चीज खाकर देखनेका आग्रह अेक अजीब बात थी। अुनके ध्यानमें भी वह बात आ गयी। कहने लगे — 'कुम्हड़ा भी कितना मीठा हो सकता है, अिसका अनुभव करनेके लिअे ही मैंने तुम्हें खाकर देखनेके लिअे कहा है।'

यहीं मुझे अेक पहलेकी बात भी याद आती है।

किसी कारणसे मैं बापूके पास गया था। वहाँ कोअी सज्जन आये और अुन्होंने बापूके सामने कुछ फल रखे। अुनमें चीकू बड़े अच्छे थे। बापूने तुरन्त दो बड़े बड़े चीकू निकालकर मुझे देते हुअे कहा — काका, ये दो चीकू महादेवको दे दो। अुसे चीकू बहुत पसन्द हैं।' महादेवभाअी मेरे पड़ोसमें ही रहते थे। मैं अुनके पास गया और कहा — 'महादेवभाअी, मैं आपके लिअे प्रेमका सन्देश लाया हूँ।' चीकू देखकर महादेवभाअी खुश हो गये। कहने लगे — 'सचमुच प्रेमका ही सन्देश है।'

बापूके सब विचार मूलग्राही होते हैं। जीवनका अेक भी अंग या अंश अैसा नहीं, जिसपर अुन्होंने विचार न किया हो। अुनके मित्र केलनबॅक, जो कि जर्मन यहूदी थे और आर्किटेक्ट होनेके कारण खूब कमाते थे, हमेशा बापूसे कहा करते — 'आपकी कोअी बात किसीको मान्य हो या न हो, लेकिन यह हर आदमी देख सकता है कि अुसके पीछे आपकी विचारणा तो होती ही है।'

अिस बातका अनुभव मुझे भी आश्रममें जाते ही हुआ था। आश्रमका भात मुझे बिलकुल पसन्द नहीं आता था। अेक दिन मैंने बापूसे कहा — '*यह भात है या गारा ? हम अैसा भात कभी नहीं खाते।*' बापूने हँसकर कहा — 'सो तो मैं भी जानता हूँ। पहले अिसका स्वाद तो लेकर देखो।'

अिसीके साथ फिर प्रवचन शुरू हुआ :

'लोगोंको भात चाहिये मोगरेकी कली-जैसा। पहले ही मिलका पालिश किया हुआ चावल लेते हैं, जिसपर से सारा पौष्टिक तत्त्व अुतार लिया जाता है। जहाँसे अंकुर निकलता है, वही चावलका सबसे अधिक पौष्टिक भाग होता है। वह भाग भी चला जाता है। फिर, भात सफेद हो अिसलिअे पानीसे अितने दफे धोते हैं कि थोड़े बहुत और भी तत्त्व निकल जाते हैं। फिर अुबालने पर जो माँड रहता है अुसे भी निकाल देते हैं। अिस तरहसे चावलको बिलकुल निःसत्त्व करके खाते हैं। वह भी अगर पूरा पका हुआ न हो, तो बराबर चबाया नहीं जा सकता। और आवश्यकतासे अधिक खाया जाता है। खाते ही नींद आने लगती है और फिर गणेश-जैसी तोंद निकल आती है। आश्रममें हम अिस तरहका चावल नहीं पकाते। पहले तो हमारा चावल होता है हाथका कुटा। अुसे हम धोते भी थोड़ा ही हैं। फिर पानीमें रख छोड़ते हैं। बादमें अिस तरह पकाते हैं कि अुसका सारा माँड और पानी अुसीमें समा जाये। पकनेके बाद अुसे

अैसा घोटते हैं कि बिलकुल खोवा बन जाता है। वह स्वादमें अच्छा रहता है। चीनी न डालते हुअे भी वह मीठा लगता है। कम खाया जाता है। अधिक पौष्टिक होता है। और तोंद नहीं निकलती।'

अितनी सब दलीलें सुननेके बाद मुझमें भी श्रद्धा जागी और मैं भी अुस भातमें रस लेने लगा। बादमें अिसी भातमें मुझे भी सब गुण मालूम होने लगे और मैं अुसका बड़ा हामी बन गया!

९१

अेक दिन मैंने बापूसे पूछा — 'आज जिसे गांधी टोपी कहते हैं, वही आपको कैसे पसन्द आयी?' बापू कहने लगे — 'हिन्दुस्तानके भिन्न भिन्न प्रान्तोंके जो शिरोवेष्टन है, अुनपर मैं विचार करने लगा। हमारे गरम देशमें सिरपर कुछ न कुछ तो चाहिये ही। बंगाली लोग और दक्षिणके कुछ ब्राह्मण नंगे सिर रहते हैं, लेकिन अधिकांश हिन्दुस्तानी तो कुछ न कुछ शिरोवेष्टन रखते ही हैं। पंजाबी फेटा है तो अुम्दा, लेकिन बहुंत कपड़ा लेता है। पगड़ियाँ गन्दी होती हैं, कितना ही पसीना पी जाती हैं। हमारी गुजरातकी कोनीकल बेंगलोर टोपियाँ बिलकुल ही भद्दी दीख पड़ती हैं। महाराष्ट्रकी हंगेरियन टोपियाँ अुससे कुछ अच्छी तो हैं, लेकिन वे फेल्ट (नमदे) की होती हैं। यू० पी० और बिहारकी पतली टोपी तो टोपी ही नहीं है। वह शोभा भी नहीं देती। यह सब सोचते सोचते मुझे काश्मीरी टोपी अच्छी लगी। अेक तो है अुम्दा और हल्की, बनानेमें तकलीफ नहीं और घड़ी हो सकनेके कारण हम अुसे जेबमें भी रख सकते हैं और सन्दूकमें भी दबाकर रख सकते हैं। काश्मीरी टोपियाँ अूनी होती हैं। मैंने सोचा कि वे सूती कपड़ेकी ही बननी चाहियें। फिर विचार किया रंगका। कौनसा रंग सिरपर शोभेगा। अेक भी पसन्द नहीं आया। आखिर यही निर्णय किया कि सफेद ही सबसे अच्छा रंग है। पसीना भी अुसपर जल्दी दिखायी पड़ता है और अिसलिअे अुसे धोना ही पड़ता है। अुधर धोनेमें भी तकलीफ नहीं। टोपी घड़ीदार होनेके

कारण और सफेद होनेके कारण आदमी सुथरा दिख पड़ता है। यह सारा विचार करके मैंने यह टोपी बनायी। असलमें तो हमारे देशकी आबोहवाकी दृष्टिसे मुझे सोला हेट ही पसन्द है। धूपसे सिरका, आँखोंका और गरदनका रक्षण करता है। लकड़ीके बूरेका होनेके कारण हलका और ठंडा रहता है। सिरको कुछ हवा भी लग सकती है। आज जो मैं अिसका प्रचार नहीं करता अुसका कारण यही कि अुसका आकार हमारी सारी पोशाकके साथ मेल नहीं खाता। और युरोपियन ढंगकी होनेसे लोग अुसे अपनायेंगे भी नहीं। अगर हमारे कारीगर अुस विलायती टोपीके गुण कायम रखें और आकारमें अपनी पोशाकके साथ अुसका मेल बैठा सकें, तो बड़ा अुपकार होगा। हमारे कारीगर अगर सोचें तो यह काम कठिन नहीं है।'

९२

बापू वर्धा आकर मगनवाड़ीमें रहने लगे, तब यहाँके लोगोंकी हालत देखकर आहार पर ज्यादा विचार करने लगे। बाजारमें शाक मिलता नहीं, और मिलता है तो महँगा। यह देखकर अुन्होंने गाँवमें तलाश की कि वहाँ अैसे कौनसे शाक मिलते हैं जो गरीब लोग खाते हैं और जो शहरके बाजारोंमें बिकनेके लिअे नहीं आते? तब फिर मगनवाड़ीमें वही शाक मँगाया जाने लगा। बापूको देखना था कि अैसे शाकोंमें कितनी पौष्टिकता है, और अुनके गुणदोष क्या क्या हैं? जितने खानेवाले थे अुन सबसे वे अपना अपना अनुभव पूछ लेते थे। बादमें अुन्हें सन्तोष हुआ कि कुछ शाक अैसे हैं, जो सब दृष्टिसे खाने लायक हैं।

अुन्हीं दिनों सोयाबीनका भी प्रयोग चला था। सोयाबीन मँगवाये जाते। अुन्हें पकाते। पकानेके बाद पीसते। ये सब बातें कअी दिनों तक चलती रहीं। अिस बीच सोयाबीन पर का साहित्य भी बापूने काफी पढ़ लिया। लेकिन जान पड़ता है कि सोयाबीनसे अुन्हें विशेष संतोष नहीं हुआ!

९३

सन् '२७के बादकी बात है। मैसूरमें स्टूडेन्ट्स वर्ल्ड फेडरेशनका अधिवेशन था। विद्यार्थियोंके बीच काम करनेवाले अमेरिकाके रेवरेंड मॉट् अुसके अध्यक्ष थे। हिन्दुस्तान आनेपर वे बापूको मिले बगैर तो जाते ही कैसे? वे अहमदाबाद आये और अुन्होंने बापूसे मुलाकातका समय माँगा। बापू दिनभर बहुत ही काममें थे। अिसलिअे रातको सोनेके पहले अुन्हें १० मिनटका समय दिया। मैं भी विद्यापीठसे आश्रम गया। कुतूहल यही था कि देखें १० मिनटमें क्या क्या बातें होती हैं!

बापू आँगनमें सोये हुअे थे। पास ही अेक बेंच पर रेवरेंड मॉट् आकर बैठे। वे अपने सवाल लिखकर लाये थे। हरिजन आन्दोलनके बारेमें कुछ पूछा। मिशनरी लोगोंकी सेवाका क्या क्या असर हुआ है सो पूछा। फिर दो सवाल अुन्होंने पूछे, जिनके अुत्तर मेरे मनमें गड़ गये हैं। अैसे सवाल शायद ही कभी कोअी पूछते होंगे।

सवाल : 'आपके जीवनमें आशा निराशाके प्रसंग बहुत आते होंगे। अुनमें आपको किस चीजसे अधिकसे अधिक आश्वासन मिलता है?'

जवाब : 'लोगोंकी चाहे जितनी छेड़छाड़ हो जाय फिर भी अिस देशकी जनता अपनी अहिंसावृत्ति नहीं छोड़ती, अिस बातसे मुझे सबसे बड़ा आश्वासन मिलता है।'

सवाल : 'और अैसी कौनसी चीज है, जो आपको दिनरात चिंतित रखती है और जिससे आप हमेशा अस्वस्थ रहते हैं?'

सवाल कुछ विचित्र तो था ही। बापू अेक क्षण ठहर गये, फिर बोले — 'शिक्षित लोगोंके अंदर दयाभाव सूख गया है, अिस बातसे मैं हमेशा चिंतित रहता हूँ।'

ये प्रश्न और अुनके अुत्तर सुनकर मैं अस्वस्थ-सा हो गया। विद्यापीठ जाकर सोया तो सही, लेकिन नींद नहीं आयी। मैंने सोचा

अनपढ़ जनताके युवकोंको बुलाकर मैं अुन्हें शिक्षित करता हूँ यानी बापूको आश्वासन देनेवाले वर्गको कम करके अुन्हे चिंतित और अस्वस्थ बनानेवाले वर्गको बढ़ाता हूँ। क्या यही मेरे परिश्रमका फल है? मैं जो शिक्षा दे रहा हूँ, अुसे राष्ट्रीयताका लेबल लगा हुआ है सही, लेकिन अिससे मेरा सन्तोष कैसे होगा!

अिसके बाद ही मैंने विद्यापीठमें ग्रामसेवा-दीक्षितोंका अभ्यासक्रम जारी किया।

९४

बापूकी अेक बहन हैं। बापूने जब दक्षिण अफ्रीकामें आश्रम खोला, तो अपना सर्वस्व वहाँके आश्रमको यानी देशको दे दिया। जब हिन्दुस्तान आये, तो यहाँकी अपनी मिल्कियतके घरका हक भी छोड़ दिया। रिश्तेदारोंको बुलाकर अुसकी लिखापढ़ी कर दी और अपने चारों लड़कोंके हस्ताक्षर भी अुसपर करवा दिये। अिस तरह वे पूर्ण अकिंचन बन गये।

अब गोकी बहन (बापूकी बहन)के खर्चेका क्या होगा? खानगी कामोंके लिअे बापू कभी किसीसे माँगते नहीं हैं। फिर भी अुन्होंने अपने पुराने मित्र डॉ० प्राणजीवन मेहतासे कह दिया कि गोकी बहनको मासिक १० रुपया भेजा करें।

कुछ दिनों बाद गोकी बहनकी लड़की विधवा हो गयी और माँके साथ रहने लगी। गोकी बहनने बापूको लिखा कि अब खर्चा बढ़ गया है। अुसे पूरा करनेके लिअे हमें पड़ोसियोंका अनाज पीसनेका काम करना पड़ता है। बापूने जवाबमें लिखा — 'आटा पीसना बहुत ही अच्छा है। दोनोंका स्वास्थ्य अच्छा रहेगा। हम भी आश्रममें आटा पीसते हैं।' और लिखा — 'जब जी चाहे तुम दोनोंको आश्रममें आकर रहनेका और बने सो जन-सेवा करनेका पूरा अधिकार है। जैसे हम रहते हैं, वैसे ही तुम भी रहोगी। मैं घर पर कुछ नहीं भेज सकता। न अपने मित्रोंसे ही कह सकता हूँ।'

जो बहन आटा पीसनेकी मजूरी कर सकती है, अुसे आश्रम जीवन कठिन नहीं मालूम हो सकता। लेकिन आश्रममें तो हरिजन भी थे न? अुनके साथ रहना, खाना, पीना पुराने ढंगके लोगोंसे कैसा हो!

वह नहीं आयीं। सिर्फ अेक समय बापूसे मिलने आयी थीं, तब मैंने अुनके दर्शन किये थे।

९५

आश्रमके प्रारम्भकी बात है। हम कोचरबमें रहते थे। हमारे बंगलेके सामने रास्तेके अुस पार अेक कुआँ था, अुससे पानी लाते थे। आश्रममें कोअी नौकर तो थे ही नहीं। सब काम हम ही करते थे।

बापूको बीच बीचमें बम्बअी जाना पड़ता था। तीसरे दर्जेकी मुसाफिरी, सारी रात नींद नहीं, फिर दिनभर काम और रातको सोना। पहले मैं मानता था कि बापू बिस्तर पर जाते ही सो जाते होंगे, लेकिन वैसा नहीं था। वहाँ भी बाके साथ अस्पृश्यता निवारणपर चर्चा चलती। आश्रममें अेक हरिजन कुटुम्ब दाखिल हुआ था। बाको अुनके हाथका खाना मंजूर नहीं था। बा बेचारी फलाहार पर रहती थीं। लेकिन बापूको यह भी कैसे सहन हो! वे कहते — 'आश्रममें छूतछात नहीं चल सकती। अगर तुम्हें यह भेदभाव रखना है, तो राजकोट जाकर रहो। मेरे साथ नहीं रहा जा सकता।' बड़ी रात तक दोनोंकी अिस तरह चखचख चलती रहती। सुबह अुठते ही रामदास, देवदास भी बाको समझाते — 'क्यों बा, दक्षिण अफ्रीकामें तो हरिजनका छुआ तुम्हें चलता था। फिर यहाँ क्यों नहीं चलता?' बा कहतीं — 'वह तो परदेश था। वहाँकी बात दूसरी थी। यहाँ हम अपने देशमें हैं। अपने समाजकी मर्यादा कैसे तोड़ी जा सकती है!'

अिधर हमारा कुअेंसे पानी भरनेका कार्यक्रम शुरू होता। बापू भी अेक घड़ा लेकर आते। अेक दिन मैंने बापूसे कहा — 'बापूजी, आज रातको आपको नींद नहीं मिली। आपके सिरमें भी

दर्द है। सुबह मेरे साथ चक्की भी देर तक पीसी है। आप जाकर कुछ आराम करें। पानीकी कोअी चिन्ता नहीं।' लेकिन बापू कब माननेवाले थे। अुनके साथ दलील करना व्यर्थ समझ मैं और रामदास पानी खींचने लगे और दूसरे आश्रमवासी बरतन अुठा अुठाकर आश्रममें पानी भरने लगे।

अितनेमें ही मौका पाकर मैं चुपचाप वहाँसे आश्रममें गया और वहाँ जितने छोटे-मोटे बरतन थे सब अुठा ला आया और साथमें आश्रमवासी सब बच्चोंको भी बुलाता लाया। अब मैं पानी खींचता और जहाँ बरतन भरा कि बापूको टालकर दूसरेको दे देता। बच्चे भी मेरी शरारत समझ गये। दौड़ दौड़कर नजदीक आकर खड़े होने लगे। बेचारे बापू अपनी बारीकी राह ही देखते रहे। फिर आश्रममें बरतन ढूँढ़ने गये। वहाँ अेक भी बरतन न मिला। लेकिन सत्याग्रही जो ठहरे! हार कैसे सकते थे। वहाँ छोटे बच्चोंके नहानेका अेक टब मिल गया। वही अुठा लाये और कहने लगे — 'अिसे भर दो।' मैंने कहा — 'अिसे आप कैसे अुठायेंगे?' कहने लगे — 'देखो तो सही कैसे अुठाता हूँ। तुम भर तो दो।'

मैं हार गया और अेक मझले आकारका घड़ा अुठाकर अुनके सिरपर रख दिया।

९६

१९१९की बात है। अमृतसरके अत्याचारके बाद सरकारने अत्याचारकी जाँच करनेके लिअे हंटर कमेटी नियुक्त की। कांग्रेसका अुससे समाधान नहीं हुआ। अिसलिअे कांग्रेसने अुसका बहिष्कार किया।

बहिष्कारके अलावा हम और भी कुछ कर सकते हैं, यह दूसरे लोगोंके खयालसे बाहर था। लेकिन बापूने तो कांग्रेसके द्वारा अेक अपनी जाँच कमेटी नियुक्त करवायी और जाँच शुरू की। अुस कमेटीमें चित्तरंजन दास, मोतीलाल नेहरू, श्री जयकर, अब्बास तैयबजी, खुद बापू जैसे

अैसे लोग थे। तीन महीने तक जाँच हुअी। १७०० लोगोंकी गवाही ली गअी। अुनमें ६५०के बयान प्रकाशित किये गये। अब रिपोर्ट पेश करनी थी।

यह सारा मसाला लेकर बापू आश्रममें आये और रिपोर्ट लिखने लगे। अत्याचारके बयानोंसे तो वे अुबल रहे थे। रिपोर्ट लिखनेका काम दिनरात चलने लगा। अक्षरशः दिन और रात चौबीसों घण्टे लिखते ही थे। रातको कोअी दो या ढाअी घण्टे सोते होंगे। दोपहरको कभी लिखते लिखते अितने थक जाते थे कि शरीर काम करनेसे अिनकार कर देता था। अेक दिन मैंने देखा बायें हाथमें कागज है, दाहिने हाथमें कलम है, तकिये पर टिके सोये हैं, मुँह खुला हुआ है। कुछ ही क्षण गये होंगे। अेकदम चौंक कर अुठे मानो कोअी गुनाह करते हुअे पकड़े गये हों! अुठे और फिर लिखने लगे।

रिपोर्ट पूरी हुअी। कमेटीके सामने पेश हुअी। सब लोगोंके हस्ताक्षर हो जानेपर बापूने सब सदस्योंसे कहा — 'हमने हस्ताक्षर तो किये हैं, लेकिन साथ ही साथ हम यह भी प्रण करें कि जब तक अपने देशमें अैसे अत्याचारोंका होना असम्भव न कर दें, तब तक आराम नहीं लेंगे।' सब सदस्योंने प्रण किया।

अिसके बादका अितिहास सबको मालूम ही है।

९७

सन् १९२२ की बात है। सरकारने बापूको गिरफ्तार करके साबरमती जेलमें भेज दिया। अुनपर मुकदमा चलनेवाला था। अिन बीचके दिनोंमें बहुतसे लोग बापूसे मिलने जाते थे।

साबरमती जेलमें अच्छे कमरे जेलके दाहिने कोनेमें हैं। अिन्हें 'फाँसी ग्योली' कहते हैं, क्योंकि फाँसीके कैदियोंको वहीं रखा जाता है। बापूको भी वहीं रखा गया था।

अेक दिन मैं बापूसे मिलने चला। जेलके गेटपर मुझे श्री अब्बास तैयबजी मिले। वे भी बापूको मिलने ही आये थे। गेट पार करके बाअीं

ओर मुड़कर हम बापूके कमरेके पास गये। अब्बास साहबको देखते ही अुन्हें मिलनेके लिअे बापू बरामदेपरसे अुठे और सीढ़ियाँ अुतरने लगे। अिधरसे अब्बास साहब भी तेजीसे आगे बढ़े और दोनोंका मिलन सीढ़ियोंपर ही हो गया। बापूने अपना बायाँ हाथ अब्बास साहबकी कमरमें डाला और दाहिने हाथसे अुनकी दाढ़ी पकड़कर गाल फुलाकर बुर्र्र्र्र् करने लगे। अब्बास साहबने भी जवाबमें बुर्र्र्र्र् किया। दोनों हँस पड़े। मैं अुस बुर्र्र्र्र्का कुछ भी मतलब नहीं समझ पाया।

दांडी कूचके दिनोंमें (सन् १९३० में) मैं अब्बास साहबके साथ साबरमती जेलमें था। मैंने अब्बास साहबसे पूछा था कि अुस दिन बापूसे मिलते समय दोनोंने बुर्र्र्र्र् किया था, अुसका क्या मतलब था? अुन्होंने हँसते हँसते कहा — 'हम दोनों जब विलायतमें थे, तब मैंने बापूको अेक किस्सा सुनाया था। अुसमें बुर्र्र्र्र् आता था। मुझे मिलते समय बापूको वह याद आ गया था।'

अिसपर अब्बास साहबने मुझे वह सारा किस्सा सुनाया। लेकिन मैं फिर भूल गया। फिर मैंने अुस बुर्र्र्र्र्का अपना अर्थ बैठाया। वह यह था कि 'सन् १९१९में हमने जो प्रतिज्ञा की थी, अुसका पालन करते करते मैं यहाँ आ पहुँचा हूँ' अैसा बापूने सूचित किया और अब्बास साहबने जवाब दिया कि 'मैं भी यहाँ जरूर आ जाअूँगा।'

जब मैंने अपना बैठाया हुआ यह अर्थ अब्बास साहबको सुनाया तो कहने लगे — 'अुस वक्त तो मेरे मनमें अैसा कुछ नहीं था, लेकिन तुम्हारी बात सही है। हम दोनोंका सम्बन्ध ही अैसा है। मुझे तो ताज्जुब होता है कि मैं जेलमें कैसे आ गया। विशेष तो यह कि अिससे ज्यादा मैं कुछ कर सकता हूँ, सो नहीं मालूम होता। सचमुच बापू अेक अद्‌भुत व्यक्ति हैं!'

९८

सन् ३६–३७ की बात होगी। अुन दिनों बापू वर्धामें मगनवाड़ीमें रहते थे। मैं बोरगाँवमें रहता था। अुन दिनों बापू खूब काम करते थे। आये हुअे पत्रोंका जवाब लिखनेका समय ही नहीं मिलता था। अिसलिअे रातको दो-तीन बजे अुठकर लिखते थे। मैंने यह बात सुनी तो मुझसे न रहा गया। मैंने युक्तिसे बात छेड़ी — "बापूजी, आपने दक्षिण अफ्रीकामें अेक किताब लिखी है 'आरोग्य विशे सामान्य ज्ञान'। अुसमें सब बातें आ गयी हैं : आहार-टट्टीसे लेकर स्त्री-पुरुष सम्बन्ध तक। लेकिन अेक बात रह गयी।" बापूने आश्चर्यसे पूछा — 'कौनसी?' मैंने कहा — 'नींदके बारेमें अुसमें अेक भी प्रकरण नहीं है।' बापू कहने लगे — 'नींदके बारेमें लिखने जैसा क्या है? मनुष्यको नींद आती है, तब वह सोता है। अिससे अधिक क्या लिख सकते हैं?' मैंने कहा — 'यही तो बात है। आप समयपर खाते हैं, नाप तौल कर खाते हैं। दिनभरका काम बँधा हुआ रहता है। जितने लोगोंके claims आप पर आते हैं, सबको आप राजी कर लेते हैं। कोअी खत लिखता है, तो अुसे जवाब भी मिल जाता है। लेकिन अत्याचार होता है नींद पर। काम बढ़ा तो लुटी जाती है बेचारी नींद! यह कैसे चलेगा! आहारका अुपवास कुदरत दरगुजर करेगी; लेकिन नींदके अुपवासके लिअे सजा भुगतनी ही पड़ेगी!'

मैं जानता था कि मैं अपनी मर्यादा छोड़कर बोल रहा हूँ। लेकिन मैं भी क्या करता? रहा न गया अिसलिअे कह डाला।

बापू गम्भीर होकर बोले — 'तुम कहते हो अिसका अर्थ यह हुआ कि मैं गीताधर्मी नहीं हूँ। मैं तो शरीर जितना काम देता है, अुतना ही काम अुससे लेता हूँ। मैं नहीं मानता कि जो काम मैं कर रहा हूँ, वह मेरा काम है। वह तो भगवानका है। अुसकी चिन्ता अुसे है। मैं तो अपने हिस्सेका काम करनेके लिअे ही बँधा हुआ हूँ। अुससे ज्यादा करूँ, तो वह अभिमानकी बात होगी।'

*　　　*　　　*

कुछ दिन गये। मैं बोरगाँवसे मगनवाड़ी आ गया। महादेव-भाअीने मुझे बतलाया — "आज बापूका स्वास्थ्य अच्छा नहीं है। सोये हैं। सुबह अुठते ही अुन्होंने कहा — 'आज मेरा स्वास्थ्य अच्छा नहीं, blood pressure बढ़ा होगा। डॉक्टरको बुला लो, तो अच्छा होगा।' महादेवभाअी आगे कहने लगे — 'आज तक कभी बापूने अपनी ओरसे डॉक्टरको बुलानेके लिअे नहीं कहा था!' "

मैं जान-बूझकर बापूसे मिलने नहीं गया। शामकी प्रार्थनाके बाद बापूने अपने स्वास्थ्यके बारेमें ही कहना शुरू किया। प्रारम्भ था — 'मैं पूरा गीताधर्मी नहीं हूँ।'

मैं तो पुरानी बात भूल गया था। लेकिन अिस वाक्यसे मुझे अुस दिनका संवाद याद आ गया। मैंने मनमें सोचा कि मैं बापूसे कुछ कहूँ, अुसके पहले ही अुन्होंने मेरा मुँह बन्द कर दिया।

तबसे बापूने नींदका कर्ज़ बराबर अदा करनेका नियम बना लिया है।

९९

दक्षिण अफ्रीकामें पठानोंने बापूपर हमला किया, और यह समझकर कि मर गये, वे अुन्हें छोड़कर चले गये। होशमें आते ही बापूने पहली बात यह कही कि जिन्होंने मुझपर घातक हमला किया है, अुन्हें सजा नहीं होनी चाहिये। मैं मेरी ओरसे अुन्हें क्षमा करता हूँ।*

अुस दिनसे बापूके परम मित्र मि० कैलनबॅक बापूको कहीं अकेले जाने नहीं देते थे। कैलनबॅक अूँचे पूरे और गँठे हुअे शरीरके थे। कुश्ती, बाक्सिंग वगैरा सब कुछ अच्छी तरह जानते थे। जहाँ बापू जाते वहाँ वे अंग रक्षककी तरह साथ ही रहते।

अेक दिन बापू किसी सभामें गये थे। कैलनबॅकको पता चला था कि बापूपर वहाँ गोरोंका हमला होनेवाला है। अुन्होंने अपनी पेंटके जेबमें रिवाल्वर रख लिया। जब बापूको पता चला कि ये रिवाल्वर

* यह सारा किस्सा अुनकी 'आत्मकथा' में आ ही गया है।

ले कर चले हैं, तो बहुत ही गुस्सा हुअे और कहने लगे — 'फेंक दो वह रिवाल्वर। तुम्हारा विश्वास भगवान पर है कि रिवाल्वर पर ? मेरी रक्षाके लिअे मेरे साथ आनेकी जरूरत भी क्या है ? क्या मैं भगवानके हाथमें सुरक्षित नहीं हूँ ? जबतक मुझसे काम लेना है, वह मुझे बचायेगा ही।'

अिसके बादकी अेक घटना है। गोरोंकी सभा थी। कैलनबॅक वहाँ गये थे। सभाके किनारेपर खड़े थे। वहाँ किसी वक्ता या श्रोताके साथ चर्चामें अिनका झगड़ा हो गया। अंग्रेज तो . . . होते ही हैं। ताकत हो या न हो बन्दर घुड़की जरूर दिखायेंगे। अुस अंग्रेजने कैलनबॅकको ललकारा — 'Come along, let us fight it out.' कैलनबॅकने ठण्ढी आवाजसे जवाब दिया — 'But I am not going to fight you.' सारा समाज स्तम्भित होकर देखता ही रहा। कैलनबॅकका शरीर और अुनका कुश्तीका कौशल सब जानते ही थे। कोअी अुन्हें कायर नहीं कह सकता था और ललकारे जानेपर तो क्या कोअी कायर भी अिस तरहसे अिनकार कर सकता है ? सब अचम्भेमें पड़ गये

यह किस्सा मैंने श्री मगनलालभाअी गांधीसे सुना था।

१००

चम्पारनकी बात है। बापूकी ओरसे होनेवाली अन्याय अत्याचारोंकी जाँचसे प्रजामें कुछ जान आ रही थी। स्थान स्थानपर बापूने जो स्कूल खोले, अुनका भी लोगोंपर असर पड़ रहा था। निलहे गोरे बड़े ही परेशान थे!

किसीने बापूसे कहा — 'यहाँका निलहा सबसे दुष्ट है। वह आपको मार डालना चाहता है। अुसने हत्यारे तैनात किये हैं।'

सुनते ही अेक दिन रातको बापू अकेले अुसके बंगलेपर पहुँच गये और कहने लगे — 'मैंने सुना है कि आपने मुझे मार डालनेके लिअे हत्यारे तैनात किये हैं। अिसलिअे किसीको कहे बिना अकेला आया हूँ !'

बेचारा निलहा स्तम्भित हो गया।

१०१

सन् १९१७ की बात होगी। बापू आश्रममें शामकी प्रार्थनाके बाद अपने बिस्तरपर तकियेका सहारा लेकर बैठे बातें कर रहे थे। बापूको ठंढ लगेगी अिस खयालसे पूज्य बाने अेक चादर चौहरी करके अुनकी पीठपर डाल दी थी। बापू आश्रमवासी श्री रावजीभाअी पटेलसे बातें कर रहे थे। रावजीभाअीको चादरपर अेक काली लकीर-सी दिखायी दी। गौरसे देखा तो मालूम हुआ कि अेक बड़ा काला साँप पीछेसे आकर बापूके कन्धे तक पहुँच गया है। और आगेका रास्ता तय करनेके लिअे अिधर अुधर देख रहा है। रावजीभाअीका ध्यान भंग हुआ देखकर और अुनको कंधेकी तरफ ताकते देखकर बापूने पूछा — 'क्या है, रावजीभाअी?' बापूको भी भान तो हुआ था कि पीठपर कुछ भार है। रावजीभाअीमें प्रसंगावधान अच्छा था। अुन्होंने सोचा कि जोरसे कहूँगा तो बा वगैरा सब लोग घबरा जायँगे और दौड़धूप होनेसे साँप भी घबरा जायगा। अुन्होंने कहा — 'कुछ नहीं बापू, अेक साँप आपकी पीठपर है। आप बिल्कुल स्थिर रहें।' बापूने कहा — 'मैं बिलकुल स्थिर रहूँगा। किन्तु तुम क्या करना चाहते हो।' रावजीभाअीने कहा — 'मैं चारों कोने पकड़कर साँप समेत चादर अुतार दूँगा।' यह चहल पहल होते ही साँप चादरके अंदर घुस गया था। बापूने कहा — 'मैं तो निश्चेष्ट बैठूँगा, लेकिन तुम सँभालना।'

रावजीभाअीने चादर अुठाअी और अुसे दूर ले गये। और साँप जैसे ही चादरमेंसे बाहर निकला, अुसे दूर फेंक दिया।*

दूसरे दिन अखबारोंमें समाचार प्रकट हुआ कि अेक नागने आकर बापूके सिरपर फन फैलायी थी। अब बापू चक्रवर्ती राजा

---

* श्री रावजीभाअीने अपनी किताबमें यह किस्सा सविस्तर दिया है। मुझे जैसा याद था वैसा यहाँ मैंने दिया है।

होनेवाले हैं। अेक मित्रने मुझे कहा — 'नाग अुनके कन्धे तक ही चढ़ा था। अगर सिरतक चढ़ता तो जरूर वे हिन्दुस्तानके चक्रवर्ती सम्राट हो जाते!'

अेक दिन अिस घटनाका स्मरण होते मैंने बापूसे पूछा कि जब साँप आपके शरीरपर चढ़ा, तो आपके मनमें क्या क्या हुआ? वे बोले — 'अेक क्षणके लिअे तो मैं घबरा गया था, लेकिन सिर्फ अुसी क्षणके लिअे। बादमें तो तुरन्त सँभल गया। फिर कुछ नहीं लगा। फिर विचार आने लगे कि 'अगर अिस साँपने मुझे काटा, तो मैं सबसे यही कहूँगा कि कमसे कम अिसे मत मारो। आप लोग किसी भी साँपको देखते ही अुसे मारने पर अुतारू हो जाते हो, और न मैंने वैसा करनेसे आपमेंसे किसीको अभी तक रोका है। लेकिन जिस साँपने मुझे काटा है, अुसे तो अभयदान मिलना ही चाहिये।'

हमारे हिन्दुस्तानी प्रकाशन

	कीमत
दिल्ली - डायरी	३—०—०
अीशु ख्रिस्त	०-१४-०
अेक धर्मयुद्ध	०—८—०
गोसेवा	१—८—०
मरुकुंज	१—४—०
हमारी बा	२—०—०
रचनात्मक कार्यक्रम	०—६—०
हिन्द और ब्रिटेनका आर्थिक लेन-देन	०—८—०
जीवनका काव्य	२—०—०
राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी	१—८—०
गांधीजी	०-१२-०
हिमालयकी यात्रा	२—०—०
आरोग्यकी कुंजी	०-१०-०
वर्णव्यवस्था	१—८—०
प्रेमपन्थ – १	०—४—०
हिन्दुस्तानी बालपाठावलि	०—५—०
हिन्दुस्तानी पाठावलि (नागरी)	०—६—०
हिन्दुस्तानी पाठावलि (अुर्दू)	०-११-०
हिन्दुस्तानी कहानी-संग्रह (नागरी)	०—४—०
हिन्दुस्तानी कहानी-संग्रह (अुर्दू)	०—५—०
सयानी कन्यासे	छपता है
निर्भयता	

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद

हमारे हिन्दुस्तानी प्रकाशन

	कीमत
दिल्ली - डायरी	३—०—०
अीशु ख्रिस्त	०-१४-०
अेक धर्मयुद्ध	०—८—०
गोसेवा	१—८—०
मरुकुंज	१—४—०
हमारी बा	२—०—०
रचनात्मक कार्यक्रम	०—६—०
हिन्द और ब्रिटेनका आर्थिक लेन-देन	०—८—०
जीवनका काव्य	२—०—०
राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी	१—८—०
गांधीजी	०-१२-०
हिमालयकी यात्रा	२—०—०
आरोग्यकी कुंजी	०-१०-०
वर्णव्यवस्था	१—८—०
प्रेमपन्थ – १	०—४—०
हिन्दुस्तानी बालपाठावलि	०—५—०
हिन्दुस्तानी पाठावलि (नागरी)	०—६—०
हिन्दुस्तानी पाठावलि (अुर्दू)	०-११-०
हिन्दुस्तानी कहानी-संग्रह (नागरी)	०—४—०
हिन्दुस्तानी कहानी-संग्रह (अुर्दू)	०—५—०
सयानी कन्यासे	छपता है
निर्भयता	

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर
अहमदाबाद